IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)
An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

राजनीति का अपराधीकरण और उसका भारतीय लोकतंत्र पर प्रभाव

[1] **अंजीत कुमार चौधरी**
[1] सहायक प्राध्यापक,

[1] राजनीति शास्त्र विभाग,
[1] रमाबल्लभ जालान बेला महाविद्यालय, बेला, दरभंगा

सारांश : **भ्रष्ट व्यक्ति वह है जो पतित, दूषित एवं दुराचारी है। भारत में इसे अच्छा नाम देने के लिए सुविधा शुल्क श्स्पीड मनीश या कमीशन कहा जाता हैं विदेशों में इसे श्ग्रीसिंग दी पामश कहा जाता है। राजनीतिक अपराधीकरण एक अंतर्राष्ट्रीय समस्या है। छोटे–मोटे देशों को तो इसने अपने खूनी पंजे में जकड़ रखा है। समृद्ध एवं विकसित देश इसके चंगुल में फंसते जरूर हैं पर निकल भी जाते हैं। हाल ही में संसार के अनेक राष्ट्रों में साम्यवाद का सूर्यास्त हुआ । इस अप्रत्याशित घटना का एक प्रधान कारण यह भी था कि उन देशों के शासक वर्ग एवं नौकरशाही राजनीतिक अपराध की गिरफ्त में फँस चुके थे। रोमानिया के तानाशाह एवं इंडोनेशिया के राष्ट्रपति की पत्नी के वैभव के किस्से एवं कहानियां तो सर्वविदित हैं। उनकी प्राचीन शासकों, बादशाहों, राजा–महाराजाओं से भी उत्तम जीवन शैली थी। इटली में व्याप्त भ्रष्टाचार एवं अपराध की चर्चा सारे संसार में होती है। इंग्लैंड की स्थानीय स्वायत्त सरकारें भी राजनीतिक भ्रष्टाचार के प्रभाव से दूर नहीं है।**

Index Terms **- अपराध, घटना, राजनीतिकरण.**

अपराध नैतिकता विरोधी है, पर आश्चर्य होता है कि भारत जैसे धर्म प्रधान देश में इसका क्यों प्राधान्य है। यद्यपि गुर्नार मिडलि एवं गेलब्रेथ जैसे अर्थशास्त्रियों ने कहा है कि भ्रष्टाचार एवं अपराध के अनुपात में ही विकासशील देशों की विकास दर का आभास होता है। अतः अपराध के मूल को पकड़ने के लिए हमें भारतीय विकास प्रक्रिया की ओर विहंगम दृष्टि से देखना होगा एवं भारतीय जीवन–मान्यताओं एवं जीवन पद्धति के परिदृश्य में इस विकराल समस्या के किसी भी सार्वभौम हल की ओर जाना होगा।

आज सारे देश में यदि कोई सर्वमान्य एवं सार्वभौम तथ्य है तो वह है समग्र भारत में राजनीतिक भ्रष्टाचार एवं अपराध उत्तर पूर्वी राज्यों से लेकर सौराष्ट्र तक तथा कश्मीर से लेकर केरल तक यह चिरंतन खिलखिला रहा है एवं फल फूल रहा है जैसे यह हम पर कटाक्ष करते हुए चुनौती दे रहा है–श्देखें, यदि तुम मेरा कुछ कर सको।श संपूर्ण भौगोलिक सीमा के भीतर देश के प्रत्येक वर्ग एवं श्रेणी में यह सर्वव्यापी है। प्रत्येक घर–घर से लेकर प्रत्येक संगठन, प्रत्येक श्रेणी, प्रत्येक राज्य तथा केन्द्र तक इसकी सत्ता अपराजेय है। कहते हैं यदि आंख बंद करके भी कहीं भारत में हाथ रखा जाये तो वह भ्रष्टाचार एवं अपराध के व्यापार पर पड़ेगी। प्रायः हंसी मजाक में कहा जाता है कि भारत में प्रत्येक वस्तु या व्यक्ति बिकाऊ है यदि कोई उचित खरीददार हो । यहाँ स्वतंत्रता के साथ ही भ्रष्टाचार निरोधक अधिनियम लाया गया पर यह अधिनियम भी असफल रहा । भ्रष्टाचार निरोधक अधिनियम 1947 के अनुसार सरकारी सेवक द्वारा निम्न प्रकार के कार्य भ्रष्टाचार के अंतर्गत पड़ते हैं –

- स्वेच्छापूर्वक घूस लेना।
- किसी बहुमूल्य वस्तु को बिना मूल्य प्राप्त कर लेना।
- धन का गलत उपयोग करना।
- आर्थिक लाभ हेतु सरकारी पद का दुरूपयोग करना।
- ज्ञात संपति स्रोतों से अधिक धन जमा करना।

सारांश में निजी हित के लिए अधिकारों का गलत प्रयोग करना ही भ्रष्टाचार है। गृह मंत्रालय द्वारा गठित संथानम समिति रिपोर्ट 1964 के अनुसार सार्वजनिक जीवन में किसी भी पद या स्थिति अधिकारों का या प्रभाव का अनुचित या स्वार्थी तरीके से उपयोग करना भी भ्रष्टाचार में सम्मिलित है। अमेरिका के राष्ट्रपति के चुनाव में तो करोड़ों लाखों डालरों का लेन–देन होता ही है। उसे अमेरिका जैसे खुले देश में श्भ्रष्ट–तंत्रश की संज्ञा दी गयी है अर्थात राष्ट्रपति के निर्वाचन के पश्चात् वे व्यक्ति ही उच्च नौकरशाही एवं राजनीति के उच्च पदों पर विराजमान होंगे जिन्होंने अमेरिका के राष्ट्रपति के चुनाव में सहायता की थी। अमेरिका के राष्ट्रपति को विजयी होने पर उन व्यापारियों एवं कंपनियों को भी लाभ पहुंचाना पड़ता है जिन्होने उनके चुनाव के दौरान आर्थिक रूप से मदद की थी। श्वाटरगेट कांड के प्रकाश में आने पर तो निक्सन जैसे शक्तिशाली राष्ट्रपति भी राष्ट्रपति की कुर्सी से लुढ़क पड़े। जापान के प्रसिद्ध लोकहीड कांड में वहां प्राक्तन प्रधानमंत्री को चार वर्ष की सजा हुई एवं घूस की राशि के बराबर दंड दिया गया क्योंकि अपने मंत्रित्व काल में (1973–74) में उन्होने परिवहन मंत्री को प्रभावित करके हवाई जहाजों की खरीद में प्रायरू 2.2 करोड़ रूपया की रिश्वत ली थी। इसी प्रकार के आरोपों में कोरिया के निवर्तमान राष्ट्रपति को फांसी की सजा सुना दी

गयी थी पर शायद वह सजा अब श्जीवन–कैदश में बदल गयी है। उच्चतम न्यायालय के अवकाश प्राप्त न्यायमूर्ति श्री वी0आर0 कृ ष्णा अय्यर ने ठीक ही कहा है– अदालतें भ्रष्टाचार के छोटे–मोटे मामलों में केवल इसलिए सख्ती कम नहीं कर सकती क्योंकि बड़े व्यक्तियों को पकड़ा नहीं जा रहा है।

भ्रष्टाचार के परिणाम

म्यानामार की विपक्षी नेता स्यूक्यू का कहना है कि भ्रष्टाचार का सबसे खतरनाक परिणाम यह है कि यह समाज में भेदभाव उत्पन्न करता है। भूतपूर्व प्रधानमंत्री स्व0 इंदिरा गांधी ने कहा था – भ्रष्टाचार के कार्य हमारे भविष्य की नींव, जो हम बना रहे हैं, में दरार डाल सकते हैं। इंग्लैंड एवं फ्रांस में प्रायः यौन कांडों की लपेट में आकर बीच–बीच में लोकप्रिय सरकारों के तख्ते ही पलट जाते हैं। पाकिस्तान के तानाशाह अयूब खां के समय ब्रिटेन का कीलर कांड काफी प्रसिद्ध रहा कि किस प्रकार श्यौन सुन्दरियोंश राजनीतिज्ञों को फंसाती थीं। खाड़ी देशों में तो वंशानुक्रम से शासक चले आते हैं, उनका ही देश की पूरी धन–संपति पर अधिकार रहता है। यदि वे भ्रष्टाचार में लिप्त हों भी तो उसकी जांच एवं दंड देनेवाले वे ही हैं। ब्रूनों के शासक के विषय में तो भांति–भांति की यौनाचार एवं धन संबंधी भ्रष्टाचारण की किवंदन्तियां विश्वप्रसिद्ध है। यदि विश्व का सबसे धनी व्यक्ति भ्रष्टाचार में सबसे अधिक आगे न हो, तो यह भी एक आश्चर्य होगा? धन अर्थहीन हो जायेगा यदि उसका उपयोग न किया जा सकें । इस दर्शन के समर्थकों द्वारा ही राजनीति में भ्रष्टाचार अपराध का पौधा फलता–फूलता है एवं वह उतना बड़ा हो जाता है कि उसके नीचे भांति–भाति के माफिया गिरोह पलते हैं जो बाद में अपने आश्रयदाताओं के ही खून के प्यासे बन जाते हैं। वे अपने अपराधों से समाज के सामान्य व्यक्ति पर भी कहर ढाते हैं। लैटिन अमेरिका के विभिन्न देशों के हटाये गए राष्ट्राध्यक्षों ने सन् 1952–61 वर्षों के बीच अकूत संपति अर्जित की एवं देश को विदेशी ऋणों के बोझ में डूबा दिया। इसी प्रकार 1972 में छह राष्ट्राध्यक्ष पकड़े गए। अफ्रीका में जाम्बिया, लीबिया, पश्चिमी अफ्रीका सहित अनेक देश तो भ्रष्टाचार के अभेद्य गढ़ माने जाते हैं जहां राजनीति भ्रष्टाचार की नदियां बहती रहती हैं । वहां भष्ट व्यक्ति के केवल बहती गंगा में हाथ देने की आवश्यकता है कि अपार धन उसके कर कमलों में एकत्रित हो जाता है।

जून 1982 में गोरिस पुच ने श्भष्टाचार पर सम्मेलनश में एक खोज पत्र प्रस्तुत किया जिसमें उसने हालैंड की राजधानी आमस्टर्डम में पुलिस द्वारा हेरोइन (ड्रग) माफिया एवं वेश्याओं को अवैध सुविधायें उपलब्ध कराने का खुलासा किया। ऐसी ही हालत लंदन एवं न्यूयार्क में भी पायी गयी। संसार के प्रायः सभी देशों में होटल एवं परिवहन के क्षेत्र में तो रिश्वत के बिना गाड़ी ही आगे नहीं बढ़ती है। ऋऋऋ राजनीति का अपराधीकरण कब से होना शुरू हुआ ? आखिर राजनीति को आपराधिक तौर–तरीकों से चलाने की नौबत ही क्यों आयी ? आखिर कब इस अपराधग्रस्त राजनीतिक व्यवस्था से निजात पा सकेंगे? ये. और कुछ ऐसे ही सवाल गुजरे दशकों से न सिर्फ भारतवासियों को बल्कि दुनिया के ज्यादातर देश के लोगों को मथते रहे हैं। यों तो सत्ता के साथ हिंसा का संबंध आदिकाल से रहा है। सम्राट अशोक ने अपने भाइयों को एकमुश्त मौत के घाट उतार दिया था। यह बात दीगर है कि उनके इस कृत्य को इतिहास ने इसलिये लांछित नहीं किया क्योंकि उनके भाई अनीति और अमर्यादा की राह पर थे। इसी तरह मगध के सम्राट अजातशत्रु तथा औरंगजेब द्वारा अपने पिता को सत्ता के लिए बंदी बनाये जाने की कथा भी प्रसिद्ध ही है। ऐसी और भी अनगिनत कथाएं हैं। पुराने युग में कबीले की भी यही संस्कृति थी। कबीले का मुखिया वही होता था जिसमें मारक क्षमता प्रबल होती थी। सभ्यता के विकास के बावजूद सत्ता और हिंसा का नाता अटूट रहा। पर जब शिक्षा तथा औद्योगीकरण का सिलसिला व्यवस्थित रूप से शुरू हुआ तो सत्ता के लिए हिंसक क्रियाओं को असहनीय माना जाने लगा। सबको समानता मिलने की नीति के तहत हिंसक तरीकों से सत्ता हासिल करने की प्रवृति को निरूत्साहित किया जाने लगा। पर बार–बार सत्ता का ऊंट अपने ही करवट बैठता रहा। सत्ता और हिंसा का यह अन्योन्याश्रय संबंध कभी टूट नहीं सका। वे लोग लगातार दुनिया भर में मारे जाते रहे जिन्होंने सत्ता में हिंसा के दखल का विरोध किया। फिर यह माना जाने लगा कि राजनीति और सत्ता के आसपास वही टिक सकता है, जिसके पास हिंसक तेवर है। नतीजतन, शिक्षा तथा औद्योगीकरण के संग शुरू हुई हिंसामुक्त राजनीति की अवधारणा समाप्त होती चली गयी और इसका असर पलटकर शिक्षा तथा औद्योगीकरण पर भी पड़ा क्योंकि इन्हीं दोनों के साथ हिंसामुक्त राजनीतिक सत्ता का पैगाम आया था।

प्राचीन समय से आज तक एक प्रश्न अपनी जगह पर कायम है कि पाप और अपराध में क्या अंतर है? बड़े विद्वानों का दो टूक मत रहा है कि समाज का सुव्यवस्थित ढंग से चलाने के लिए शासनकर्ताओं ने समय–समय पर कानून बनाये। समाज के जिन लोगों ने समाजिक मान्यताओं के तहत शासकों द्वारा निर्धारित उन कानूनों का जब उल्लंघन किया तो वही अपराध कहलाया। कानून की मर्यादा उसी समय तक रही जबतक उसे बनानेवाले शासकों ने उसकी मर्यादा का स्वयं पूरी निष्ठा से पालन किया। पर जब से खुद शासकों ने खुलेआम कानून का उल्लंघन करना शुरू कर दिया तब से समाज और अंततः राजनीति का अपराधीकरण होना शुरू हो गया। महान चिंतक श्खलील जिब्रानश ने कहा है–ष्जब इंसान में विवेक और बुद्धि का अभाव हो जाता है, तक अपराध होता है।ष श्खलील जिब्रानश इसे इन शब्दों में और अधिक स्पष्ट करते हैं–ष्जब तुम्हारी आत्मा (बुद्धि और विवेक) पवन पर चढ़कर दूर कहीं घूमने चली जाती है, तब तुम अकेले और असुरक्षित रह जाते हो । ऐसे में ही तुम दूसरों के साथ और आखिरकार अपने ही साथ, अपराध कर बैठते हो।" 'खलील जिब्रानश की इस टिप्पणी से स्पष्ट है कि कोई भी अपराधी भले ही अपने कुकृत्यों से दूसरों को त्रस्त करता रहे पर अंततः वह अपने आप के साथ ही अपराध करता है। चिंतक–लेखक श्आइनरैंडश का मत है कि–ष्दुष्कर्म और अपराध यथार्थ से भागने के काण ही घटित होते हैं । व्यक्ति सोचता नहीं है। कभी–कभार उठती अनायास भावनाओं और संवेगों के बहाव में बह जाता है और अपराध कर बैठता है।ष वहीं आगे श्आइनरैंडश ही फिर कहते हैं कि–ष्अपराध भावना का यह अर्थ नहीं कि व्यक्ति अपने किये का अच्छा –बुरा न पहचान सके और अपने गलत काम पर पश्चाताप न करे। मूलतः अपराध भावना का अर्थ है कि मनुष्य दोषपूर्ण है और प्रकृति से ही सदोष जन्मा है।ष इस तरह श्आइनरैंड स्पष्ट संकेत देते हैं कि मनुष्य में जहां जन्मजात अच्छी प्रवृतियां हैं, उसमें जन्मजात कुछ बुरी प्रवृत्तियां भी है।

प्राचीन युग की राजनीति पर अगर दृष्टिपात करें तो ऐसे अनगिनत शासक हुए जिनके कृत्यों ने उस समय के समाज को स्तब्ध–आक्रांत किया था । इतिहास के अनगिनत पात्र अपने आचरण को लेकर आजतक लोगों की दृष्टि से ओझल नहीं हुए हैं। राम बेशक मर्यादापुरूषोत्तम थे, अनीति के विरूद्ध लड़ने वाले एक दिव्य पुरूष थे। इसलिए वे आज भी घर–घर के आराध्य देवता हैं। पर राम द्वारा निर्दोष शंबूक की हत्या का प्रकरण राम जैसे महायशस्वी व्यक्तित्व को आज तक विवाद के घेरे में खड़ा कर देता है। महाभारत की कथा तो राजनीति के षड्यंत्रों से भरी कथा है। इसी तरह राजा हिरण्यकश्यप, चेदि के राजा बसु आदि की कथाएं भी हैं, कि आज की इस लोकतांत्रिक व्यवस्था के शासकों से कम भ्रष्ट और निरंकुश, प्राचीन काल के वे शासक नहीं थे। वैसे,

आधुनिक चीन के निर्माता श्माओ त्से तुंगश की यह टिप्पणी कि–ष्सत्ता का जन्म बंदूक की नली से होता हैष– राजनीति के अपराधीरकरण के सिलसिले में उल्लेखनीय है। माओ की यह टिप्पणी सत्ता और हिंसा के अन्योन्याश्रय संबंध का ही खुलासा करती है। दुनिया भर के देशों में बड़े–बड़े राजनतेता हत्यारा के शिकर होते रह है। 14 अप्रैल 1865 को अमरीका के राष्ट्रपति अब्राहम लिंकन की हत्या हो गयी थी। फिर अमरीकी राष्ट्रपति जॉन एफ केनेडी की पद पर रहते ही हत्या हो गयी थी। केनेडी के छोटे भाई राबर्ट केनेडी की भी बाद के वर्षों में हत्या हो गयी थी जो राष्ट्रपति पद के उम्मीदवार होने वाले थे। अमरीका के गांधी कहे जानेवाले मार्टिन लूथर किंग को भी हत्यारों के हाथ जान गंवानी पड़ी। एशिया के सभी देशों में नामवर राजनीतिज्ञों की हत्या का सिलसिला 1940 के दिनों से जो शुरू हुआ सो लगातार जोर ही पकड़ता गया। और आज तो यह अपने चरम रूप में है। विशेषकर, दक्षिण एशिया की स्थिति तो और रोमांचक है। अनगिनत प्रमुख राजनेता बीते वर्षों में हत्यारी राजनीति की भेंट चढ़ गए । मारने की तकनीक भी निरंतर वीभत्स होती चली गयी। कई राजनेता पहले जहां सामान्य रिवाल्वर से मारे गए वहीं हाल के वर्षों में भारत के पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गांधी से लकेर श्रीलंका के राष्ट्रपति रणसिंघे प्रेमदास की हत्या लिट्टे के उग्रवादियों ने मानव–बम के जरिये लोभहर्षक ढंग से की।

भारत की आजादी के छह माह भी पूरे नहीं हुए थे कि 30 जनवरी 1948 को दिल्ली में शाम की प्रार्थना सभा में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की हत्या 39 वर्षीय एक अविवाहित युवक नाथूराम विनायक गोडसे ने कर दी थी और सारा देश सन्न रहा गया था। सोलह वर्षों तक भारत की प्रधानमंत्री रह चुकी श्रीमती इंदिरा गांधी की हत्या दिल्ली स्थित प्रधानमंत्री निवास में ही 31 अक्टूबर 1984 को उनके सिख सुरक्षाकर्मियों ने कर दी थी। श्रीमती गांधी की हत्या ने भारतीय राजनीति को झकझोर कर रख दिया। श्रीमती गांधी की हत्या के लगभग दस वर्ष पहले 1975 में श्रीमती गांधी की सरकार के केंद्रीय रेलमंत्री ललितनारायण मिश्र की हत्या समस्तीपुर में हो गयी थी। 21 मई 1991 को, श्रीमती गांधी के पुत्र राजीव गांधी जिन्होंने अपनी मां की हत्या के बाद भारत के प्रधानमंत्री की गद्दी संभाली थी, की हत्या तमिलनाडु के श्रीपेरूम्बुदूर में हो गयी। भारत को राजीव गांधी की हत्या से फिर एक जबरदस्त आघात पहुंचा। राजीव गांधी के रूप में जो युवा नेतृत्व देश को मिला था, वह छिन गया । श्रीपेरूम्बुदूर में राजीव गांधी एक चुनाव सभा के दौरान मारे गए थे। उनकी हत्या के प्रकरण में भारत के छोटे से पड़ोसी देश श्रीलंका के लिट्टे उग्रवादियों का नाम सुरखियों में आया था। हालांकि, कुछ लोगों को राजीव की हत्या में कुख्यात अमरीकी एजेंसी सीआईए पर भी संदेह हुआ था। इस तरह का संदेह व्यक्त करनेवाले लोग अमरीका सरकार में मंत्री रह चुके श्ज्याफ्री आर्करश द्वारा लिखित एक चर्चित उपन्यास ष्द गेस्ट ऑफ ऑनरष के कथानक का हवाला दे रहे थे। सीआईए पर सहेह करनेवाले लोगों का कहना था कि आर्कर के उपन्यास का कथानक राजीव गांधी की हत्या के प्रकरण से बहुत मिलता–जुलता है, जिसमें सुनियोजित रूप से एक एशियायी राष्ट्र के लोकप्रिय नेता का खून यह सोचकर कराया जाता है कि उसे नेता की हत्या के बाद स्वाभाविक रूप से उसकी उत्तराधिकारी होनेवाली उसकी धर्मपत्नी को पूरी तरह नियंत्रण में रखकर उस राष्ट्र पर काबू रखा जा सकेगा। पर इस संदेह का खंडन करते हुए कई लोगों का यह भी कहना था कि राजीव गांधी अमरीका के उतने मुखर–कटु विरोधी नहीं थे कि उनकी हत्या करवाने की हद तक सीआईए वाले उतर जाते । अंततः संदेह की सुई लिट्टे (एलटीटीई) पर ही जाकर ठहर गयी थी। कई गंभीर राजनीतिक विश्लेषकों की यह स्पष्ट मान्यता थी कि राजीव गांधी ने श्रीलंका में अपने प्रधानमंत्रित्व काल मे भारतीय शांति रक्षक सेना (इंडियन पीस कीपिंग फोर्स) को भेजकर अपनी हत्या को दावत दी थी। एलटीटीई के प्रमुख प्रभाकरण ने बहुत पहले घोषणा की थी कि उनका संगठन राजीव गांधी के प्राण ले लेगा। वही हुआ भी। श्रीलंका से लेकर भारत के सीमावर्ती प्रांत तमिलनाडु में लिट्टे उग्रवादियों की गतिविधियां रोमांचक थी। बीते वर्षों में श्रीलंका के इस उग्रवादी संगठन ने श्रीलंका के कई दिग्गज नेताओं की जान ले ली। श्रीलंका के ये लिट्टे उग्रवादी अरसे से अलग तमिल ईलम राज्य की मांग को लेकर द्वीप के उत्तर–पूर्वी हिस्से में अपनी लोमहर्षक गतिविधियों के जरिये गाहेबगाहे कहर मचाते रहे थे। 1991 के फरवरी माह में श्रीलंका सरकार के प्रतिरक्षा मंत्री विजयरत्ने कोलंबो में 38 लोगों के संग उड़ा डाले गए थे। इसी तरह 23 अप्रैल 1993 को शुक्रवार के दिन श्रीलंका के दिग्गज विपक्षी नेता ललित अतुलथमुदाली की हत्या ने श्रीलंका वासियों को स्तब्ध कर दिया था। ललित की हत्या एक जनसभा में भाषण के दौरान कर दी गयी थी। ललित की हत्या के बाद श्रीलंका के कई प्रमुख नेताओं ने आरोप लगाया था कि राष्ट्रपति रणसिंघे प्रेमदास के लोगों ने ललित की हत्या का षड्यंत्र किया। पर प्रेमदास का कहना था कि ललित की हत्या के पीछे लिट्टे उग्रवादी ही थे। ललित की हत्या को लेकर मची सनसनी अभी खत्म भी नहीं हुई थी कि पहली मई 1993 को खुद राष्ट्रपति रणसिंघे प्रेमदास की हत्या हो गयी और श्रीलंकावासी बुरी तरह दहल उठे। वह शनिवार का दिन था । राष्ट्रपति प्रेमदास कोलंबो के आर्मर्स स्ट्रीट में श्मई दिवसश पर अपनी पार्टी श्युनाइटेड नेशनल पार्टीश द्वारा आयोजित विशाल रैली का निरीक्षण कर रहे थे कि तभी एक आत्मघाती बम वाहक लिट्टे उग्रवादी राष्ट्रपति प्रेमदास की जीप के पास तेजी से पहुंचा। राष्ट्रपति के सुरक्षाकर्मियों का दल जब उसे रोकने को बढ़ा ही था कि विस्फोट हो गया और प्रेमदास के चीथड़े उड़ गए थे। 69 वर्षीय प्रेमदास के चीथड़े हो चुके शव की पहचान उनकी घड़ी और अंगूठी से ही की जा सकी। प्रेमदास 1988 के दिसंबर माह में श्रीलंका के राष्ट्रपति पद पर आसीन हुए थे। श्रीलंका में 1959 में भी सब लोग दहल उठे थे, जब वहां के प्रधानमंत्री और श्रीलंका फ्रीडम पार्टी के दिग्गज नेता सोलोमान भंडार नायके की हत्या 19 सितंबर 1959 को कर दी गयी थी। इन हत्याओं के अलावे श्रीलंका में गुजरे वर्षों मे श्तमिल युनाइटेड लिबरेशन फ्रंटश के एक अमृतलिंगम जैसे कई नामी–गिरामी राजनीतिज्ञ भी मारे गए थे।

पड़ोसी देश पाकिस्तान को लेकर आये दिन यह चर्चा तेज रही कि कश्मीर और पंजाब में उग्रवाद को लहकाने में पाकिस्तान की सक्रिय भूमिका रही है। हालांकि, पाकिस्तान खुद भी हत्यारी राजनीति से कभी अछूता नहीं रहा । पाकिस्तान के प्रथम प्रधानमंत्री लियाकत अली खां का खून गोली लगने से हो गया था । अकसर फौजी शासन झेलते रहे पाकिस्तान को लगातार निरंकुश सत्ता भोगनी पड़ी। जनरल जियाउल हक के फौजी शासन में ही पाकिस्तान के प्रधानमंत्री रह चुके जुल्फिकार अली भुट्टो को फांसी की सजा हुई । खुद राष्ट्रपति जियाउलहक की मौत 7 अगस्त 1988 को हवाई यात्रा के दौरान विमान में बम विस्फोट से हो गयी। राजनीतिक हत्याओं का यह दौर पाकिस्तान में कभी थमा नहीं। 1993 में मई के पहले सप्ताह में पाकिस्तान के श्मोहाजिर कौमी मूवमेंटश के अध्यक्ष अजीम अहमद तारिक की हत्या करांची स्थित उनके निवास पर कर दी गयी। इसी तरह 1975 में बंग्लादेश के प्रथम राष्ट्रपति बंगबंधु शेख मुजीबउर्रहमान को गोलियों से छलनी होकर जान गंवानी पड़ी थी। अफगानिस्तान के प्रमुख नेता मोहम्मद दाऊद खान की भी हत्या भूलने वाली घटना नहीं है। दक्षिण अफ्रीका भी राजनीतिक हत्याओं से कभी बरी नही रहा। 10 अप्रैल 1993 को अफ्रीकन नेशनल कांग्रेस के दिग्गज नेता 50 वर्षीय क्रिसहानी का खून बोक्सबर्ग के उनके निवास पर हो गया। इसी तरह 1993 में मई के पहले सप्ताह में आर्मीनिया के 66 वर्षीय रेल मंत्री अंबटसुम की गोली मार कर हत्या कर दी गयी ।

इटली के जनजीवन को तो माफिया ने सदैव से त्रस्त किए रखा। गुजरे वर्षों में सैकड़ों अधिकारी, न्यायाधीश, व्यवसायी और आम लोग वहां माफिया तंत्र के हाथों अपनी जान गंवा बैठें । इटली के लोक अभियोजक पद पर रहे बुरेली ने एकबार कहा था कि—ष्अगर इटली की संसद को भंग कर सांसदों के बारे में निष्पक्ष—निर्भीक होकर विचार किया जाए तो तकरीबन पचास प्रतिशत सांसद भ्रष्टाचार और आपराधिक आरोप के मामले में कारागार के भीतर होंगे।" बात सही थी। इटली की क्रिश्चयन डेमोक्रेटिक पार्टी के प्रमुख नेता जूलियों आंद्रियोती सात बार इटली के प्रधानमंत्री पद को सुशोभित कर चुके थे। जूलियो पर भ्रष्टाचार के अलावे आपराधिक मामले भी थे जिनमें सबसे संगीन इटली के एक चर्चित पत्रकार की हत्या का मामला था। रूस भी अपने विघटन के बाद से एकबारगी माफिया तत्वों का मुख्य केन्द्र बन गया था। एक मॉस्को शहर में अकेले लगभग दो दर्जन माफिया गिरोह उठ खड़े हुए थे, जिनके आपराधिक तौर—तरीकों की अलग—अलग खासियत थी। मॉस्को के कुख्यात डॉन के रूप में रूसलन मुमायेव का नाम खासा चर्चित हुआ। मॉस्को की बहुमंजिली इमारतों के कारोबार में भी माफिया तत्वों ने काफी घुसपैठ की थी। इटली के माफिया तंत्र से भी रूस के माफिया तंत्र ने समीकरण कायम किया ताकि मादक द्रव्यों की तस्करी सुविधा से की जा सके। कोलंबिया की भी यही दशा थी। यहां के निवासी मादक द्रव्य माफिया से सर्दव त्रस्त रहे । मादक द्रव्य माफिया बस्कोबार के नाम से यहां के लोगों की रूह कांपती रही थी। वस्कोबार नामक इस डॉन ने सैकड़ों लोगों को मौत के घाट उतरवाया था और यहां तक कि उसने उस न्यायाधीश तक का खून करवा दिया था जिसकी अदालत में उसका मामला था। मादक द्रव्य माफिया के दबदबे के कारण ही कोलंबिया को दुनिया का "कोकीन कैपिटलष कहा जाता रहा है। जाहिर है, हत्यारी राजनीति का शिकंजा हर बीतते दिन के साथ मजबूत ही होता जा रहा है। इस तरह राजनीति के अपराधीकरण की समस्या न सिर्फ भारत या भारत के कुछ प्रांत विशेष की है, बल्कि यह समस्या विश्वव्यापी है। पर गुजरे वर्षों में भारत इस समस्या से कुछ ज्यादा ही आक्रांत हो गया है। पंजाब और कश्मीर में राजनीति से प्रेरित उग्रवादी गतिविधियां भारत को आज भी परेशान कर रही हैं। . पंजाब में सक्रिय रहे दशमेश रेजीमेंट, अकाली वार फोर्स, खालिस्तान लिबरेशन संगठन, बब्बर खलासा, भिंडरावाले टाइगर फोर्स, अखिल भारतीय सिख छात्र संगठन और पंजाब नेशनल आर्मी सरीखे अनगिनत उग्रवादी संगठनों ने पंजाब के एक से एक बड़े नेताओं, नौकरशाहों और बेहिसाब आमलोगों को मौत के घाट उतारा । पंजाब में आतंकवाद की छाया 1965 में ही दिखायी दे गयी थी, जब 6 फरवरी 1965 को पंजाब के मुख्यमंत्री प्रताप सिंह कैरों की हत्या हो गई थी।

सोलहवीं सदी में जो हिन्दुस्तान अपनी गौरव गरिमा और समृद्धि को लेकर विश्व में प्रतिष्ठा के शिखर पर थाय आज उसका सिर इन हालातों ने झुका कर रख दिया है। सोलहवीं सदी में भारत की इसी समृद्धि से आकृष्ट हो ब्रिटेन के व्यवसायियों ने यहां व्यापार के वास्ते 1599 में एक लंदन कंपनीश की नींव डाली थी और फिर व्यापारिक इरादे से हिन्दुस्तान आने लगे थे। ईस्ट कंपनीश हिन्दुस्तान में औरंगजेब के शासनकाल तक मात्र एक व्यापारिक कंपनी बनी रही थी। इससे इतर हिन्दुस्तान की सामाजिक, राजनीतिक तथा प्रशासनिक गतिविधियों से इसका कोई सरोकार नहीं था। पर सन् 1707 में जब हिन्दुस्तान के आखिरी ताकतवर मुगल शहंशाह औरंगजेब का निधन हो गया तो रियासतों के राजे—रजवाड़े और नवाब बिल्कुल अनियंत्रित और छुट्टा हो गए। मराठे शासक और तमाम हिन्दू राजे—रजवाड़े जहां अपने शासकीय दायरे में इजाफा करने को इस दौर में आतुर थे, वहीं मुस्लिम नवाबों का भी यही सिलसिला था। लिहाजा, हिन्दू—मुसलमान शासकों में पूरे देश भर में, जगह—जगह ठनने लगी। टकराव और फूट के दौर में ही शईस्ट इंडिया कंपनीश वालों ने सत्ता पर दखल जमाना शुरू किया था। फिर 1765 से बाकायदे शईस्ट इंडिया कंपनीश ने पूरी तरह भारत पर हुकूमत करनी शुरू की। 1765 से 15 अगस्त 1947 को भारत की स्वाधीनता के पहले तक, अंग्रेजो का यही नीति थी—हिन्दू—मुस्लिम मतभेद को बढ़ाकर भारत पर राज करना । अंग्रेजों को यह बात कभी बिसरायी नहीं थी कि औरंगजेब की मृत्यु के बाद हिन्दू—मुसलमानों के बीच उभरे सत्ता—संघर्ष के काण ही भारत की सत्ता में उनकी पैठ हो सकी थी। इसलिए आखिर तक वे इसी नीति पर चलते रहे कि हिन्दू—मुसलमानों को विभाजित कर ही वे विविधताओं से भरे इस देश पर शासन कर सकते हैं। 1947 में भारत से जाते—जाते भी हिन्दू—मुसलमान तनाव भड़का कर अंगरेज भारत विभाजन को अंजाम दे ही गए। इसके साथ ही भारत में एक स्थायी सांप्रदायिक तनाव की राजनीति भड़का कर अपनी राजनीति के लिये इस्तेमाल किया। इस तरह 20वीं सदी में हिन्दुस्तान में पनपी मुस्लिम सांप्रदायिकता और बढ़ती ही गयी। 1919 से 1935 की अवधि तक में संप्रदायिकता के अलावे अलगाववादी प्रवृति को भी भारत में अंग्रेजों ने खूब सींचा। पंजाब आज भी इसका उदाहरण है। पंजाब में हिन्दू बनाम सिख का विष—वीज अंगरेज ही बो गए थे, जिस विषदृवीज को आजाद भारत के नेताओं ने जलाकर राख करने के बजाय सत्ता की राजनीति में सींचकर और हराभरा ही किया। इस तरह सांप्रदायिकता, क्षेत्रीयता, जातिवाद को गहराई से भारत में उमारकर अंगरेज तो चले गए पर आजादी के बाद इन विडंबनाओं को बजाय निर्मूल करने के भारतीय राजनीतिज्ञों ने अपने स्वार्थ साधन के लिए और बढ़ाया ही। भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू की पकड़ प्रांतीय राजनीति पर शुरू में जबरदस्त थी। लेकिन चीन—भारत युद्ध में भारत के हराने के बाद भारत की निरंतर बिगड़ती गयी अर्थव्यवस्था और पंडित नेहरू की तेजी से बिगड़ती सेहत ने भारतीय राजनीतिक परिदृश्य में उथल—पुथल मचाकर रख दिया। हलांकि 1963 में श्कामराज—प्लानश के जरिये पंडित नेहरू ने प्रांतों पर केंद्र की पकड़ ढीली होती गयी। 1963 के बाद से केंद्र की प्रांतों पर ढीली पकड़ के कारण देश के विभिन्न प्रांतों की बेलगाम राजनीति में राजनीतिक अस्थिरता का जो दौर शुरू हुआ, वह बढ़ता ही चला गया। 1967 तक आते—आते राजनीतिक अस्थिरता की स्थिति पूरा विद्रूपता के साथ बढ़ गयी थी। देश में चतुर्थ आम चुनाव से लेकर 1969 के फरवरी माह में हुए चुनाव के मध्य देश के विभिन्न प्रांतों की विधानसभाओं के निर्वाचित साढ़े तीन हजार सदस्यों में लगभग साढ़े पांच सौ ने दलबदल किया था। अस्थिर और कमजोर संविद सरकारों के विभिन्न प्रांतों की सत्ता में काबिज होने से भी सत्ता के प्रति संशय का वातावरण गहराता गया। अपराधी तत्वों का दाखिला इस समय में राजनीति में तेजी से शुरू हो गया। 1969 में कांग्रेस के विभाजन से भी प्रांतों की राजनीतिक स्थिरता प्रभावित हुई। संगठन कांग्रेस और सत्तारूढ़ कांग्रेस का विवाद हर प्रांत में कमोबेश गहराया। गैर कांग्रेसी दल भी एकजुट नहीं थे, जो कांग्रेस का सशक्त विकल्प बनकर सामने आते। 1971 के मार्च महीने में हुए लोकसभा चुनाव में जब श्रीमती इंदिरा गांधी के नेतृत्व वाली कांग्रेस प्रबल बहुमत से जीत कर आयी तो एक ताकतवर राजनीतिक व्यक्तित्व के रूप में श्रीमती गांधी स्थापित हो गयी। उनकी पार्टी को अकेले अपने दम पर दो तिहाई बहुमत लोकसमा में 1971 के चुनाव में हासिल हुआ था। इसका असर 1972 में देश के विभिन्न प्रांतों में हुए विधानसभाई चुनाव पर जबरदस्त ढंग से पड़ा। सिर्फ केरल और तमिलनाडु जैसे कुछ प्रांत में कांग्रेस की सरकार नहीं बन सभी लेकिन शेष सभी प्रांतों की सत्ता में कांग्रेस सत्तारूढ़ हो गयी थी। श्रीमती गांधी का चमत्कारिक व्यक्तित्व कांग्रेस पर इतना हावी था कि उन्होंने विभिन्न प्रांतों में जिसे चाहा,

मुख्यमंत्री की गद्दी सौंपी। विभिन्न प्रांतों में जिन कांग्रेसी दिग्गजों को विधायकदल में बहुमत भी प्राप्त था, वे श्रीमती गांधी के सख्त आदेश के समक्ष विधायक दल के नेता पद हेतु अपना दावा पेश करने का साहस नहीं जुटा सके।

इस तरह पार्टी के भीतर–भीतर लोकतांत्रिक व्यवस्था का खात्मा होता चला गया। दबा दबा असंतोष राजनीति को विकृत करता गया। श्रीमती गांधी द्वारा मनोनीत ज्यादातर मुख्यमंत्री कारगर सिद्ध नहीं हो सके। हालांकि 1973–74 के दिनों में श्रीमती गांधी की अनिच्छा के बावजूद राजस्थान में हरिदेव जोशी, गुजरात में चिमनभाई पटेल तथा आंध्र प्रदेश में वेंगल राव मुख्यमंत्री पद पर काविज होने मे सफल हुए थे, पर वहीं 1975–76 के दिनों में श्रीमती गांधी ने उत्तर प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री हेमवती नंदन बहुगुणा और उड़ीसा की तत्कालीन मुख्यमंत्री नंदिनी सत्पथी से इस्तीफा भी ले लिया था, क्योंकि उस समय तक ये दोनों मुख्यमंत्री श्रीमती गांधी की नजर से उतर चुके थे। कुल मिलाकर 1972 के विधानसभा चुनाव के बाद प्रांतों में कांग्रेस की सरकारें तो बनीं लेकिन कांग्रस के भीतर ही भीषण गुटबंदी और केंद्रीय नेतृत्व की गणेश परिक्रमा कर आसानी से कुछ पा लेने की प्रवृति बढ़ती गयी। एक –दूसरे को नीचा दिखाने के लिए चरित्र हनन का दौर भी चल पड़ा और अपराधी तत्वों का सहारा खुलेआम लिया जाने लगा। कांग्रेस के भीतर मची इस भारी अराजकता का प्रभाव शासन–सत्ता पर भी विकृत रूप से झलकने लगा। लिहाजा, 1974 में गुजरात तथा विहार में क्षुब्ध आम लोग जनांदोलन के रूप में सड़क पर उतर आए । लोकनायक जयप्रकाश के नेतृत्व में 1974 के इन दिनों में उठे आंदोलन ने तेजी से एक राष्ट्रव्यापी जनांदोलन का स्वरूप ले लिया। इन आंदोलनों से क्षुब्ध और इलाहाबाद उच्च न्यायालय के फैसले से परेशान, तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती गांधी ने अपनी गद्दी बचाने के लिए देश में आपातकाल की घोषणा कर दी। लिहाजा, 1977 में जो लोकसभा का चुनाव हुआ, उसमें कांग्रेस बुरी तरह हारी श और केन्द्र में जनतापार्टी शासन में आयी। जनता शासन काल में यह उम्मीद की जा रही थी कि केन्द्र और प्रांत का रिश्ता पिछले दिनों की भांति नहीं, बल्कि ज्यादा सहज होगा। जनतापार्टी के नेतृत्व में श्रीमती गांधी की तरह का सख्त फरमान जारी करनेवाला कोई एक नेता था भी नहीं। लेकिन फिर भी स्थिति संभाली नहीं थी। केन्द्र में जनतापार्टी शासन के दौरान विभिन्न प्रांतों की सरकोरों का बंटवारा जनतापार्टी में शामिल विभिन्न राजनीतिक घटकों ने आपस में किया। इन घटकों के भीतर भी कई गुटदुउपगुट थे। लिहाजा, पिछली कांग्रेसी प्रांतीय सरकारों में तमाम गुटबंदी के बावजूद जो एक केंद्रीय नेतृत्व का भय था और उस भय के कारण लड़–भिड़ कर भी अंततः एक बने रहने की जो स्थिति थी, वह स्थिति अब प्रदेशों में काबिज उन दिनों की जनता सरकारों में नहीं थी। लिहाजा, राजनीतिक अस्थिरता की स्थिति फिर से तेज होती चली गयी। अस्थिरता के इस दूसरे चरण की स्थिति में भी अपराधी तत्वों ने राजनीति में जमकर घुसपैठ की । इस राजनीतिक अस्थिरता के परिणाम स्वरूप अंततः देश को फिर से चुनाव का मुंह देखना पड़ा और 1980 में श्रीमती गांधी फिर सत्तारूढ़ हुई। लेकिन सत्ताच्युत होकर फिर सत्ता में लौटने के बावजूद श्रीमती गांध की कार्यशैली में रत्ती भर भी फर्क नहीं आया था। 1980 से फिर प्रांतों में पसंदीदा मुख्यमंत्री की नामजदगी का वही पुराना सिलसिला चल पड़ा। पिछली तमाम राजनीतिक अराजकता का वीभत्स परिणाम यह भी हुआ कि 1980 से देश में उग्रवादी शक्तियां अपने भयानक पंजे फैलाने लग गयीं थी। इस उग्रवाद के परिणाम स्वरूप श्रीमती गांधी को अपनी जान गंवानी पड़ गयी। वर्ष 1981 में देश के कुल 538 जिलों में से 477 जिलों में भारतीय दंड विधान की धाराओं के तहत 5000 आपराधिक मामले दर्ज किए गए। इनमें रेल पुलिस के अन्तर्गत आनेवाले अपराध भी शामिल थे। जबकि 1991 में देश के 445 जिलों में ही अपराध अपना पैर फैला सका। जाहिर है, अपराध की वृद्धि के बावजूद आंकड़ों को कम कर बताया जाता रहा । बहरहाल, देश की हालत खराब होती गयी। ऋ ष्दुसरों पर हुक्म चलानेवाले सभी लोगों को न सिर्फ सामान्य अर्थ में धार्मिक होना चाहिए बल्कि वास्तविक अर्थ में आध्यात्मिक होना चाहिए। उनकी अंतरात्मा पवित्र हो, ताकि वे अपने अधिकार का उपयोग जनता की भलाई. उनकी सेवा के लिए कर सकें। देश चाहे जितनी तरक्की कर ले, चारित्रिक विकास के बिना वह महान नहीं हो सकता । हमें एक महान राष्ट्र का महान नागरिक बनना है न कि एक महान राष्ट्र में तुच्छ व्यक्ति बने रहना है।

हमारे राजनीतिक जीवन में आज ऐसी स्थिति आ गई है जहां आपराधिक छवि वाले लोगों को उच्च पद देकर लामान्वित करने में थोड़ी सी भी हिचकिचाहट नहीं रह गई है और अपराधियों से राजनीतिज्ञों को अलग करने वाली बारीक लकीर भी लुप्त हो गई है। अपराधीकरण वैधता हासिल करती जा रही है। समाज में आपराधिक रिकार्ड अब कोई वर्जना नहीं है। इन सब बातों की पराकाष्ठा तब हुई जब आपराधिक आरोपों का सामना कर रहे एक ऐसे व्यक्ति को देश का गृह राज्य मंत्री नियुक्त किया गया जिस पर भारतीय दंड संहिता के तहत गंभीर आरोप थे। देश की आंतरिक सुरक्षा और कानून व्यवस्था बनाए रखने के मामले में गृह मंत्रालय काफी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। कुछ साल पहले जाने–माने लेखक वेल्स हेगेन ने अपनी पुस्तक आफ्टर नेहरू, हूँ? (1962) में तत्कालीन गृहमंत्री लाल बहादुर शास्त्री का जिक्र करते हुए लिखा था कि इस देश का गृहमंत्री ऐसा व्यक्ति है जोरू खुफिया तंत्र के विशाल नेटवर्क वाले करीब पांच लाख पुलिस कर्मियों को नियंत्रित करता है। वह अंततः 44 करोड़ 30 लाख लोगों के जीवन की रक्षा करता है और उसके कल्याण की सोचता है। गृहमंत्री के बिना भारत एक भौगोलिक अभिव्यक्ति भर है। देश में सर्वोच्च राजनीतिक पदों पर राजनीति के अपराधीकरण को स्वीकार करने की संस्कृति 1980 के बाद पैदा हुई। 1998 के आम चुनावों के पहले चुनाव आयोग ने घोषणा की थी कि जनप्रतिनिधित्व कानून के तहत अपराधिक मामलों में सजायाफ्ता व्यक्ति को चुनाव लड़ने के लिए अयोग्य करार दिया जाएगा। भले ही मामले में अपील अदालत मे लंबित हो। चुनाव आयोग का यह स्टैंड कानूनन वैध था लेकिन ऐसा लगता है कि इस बारे मे चुनाव आयोग की नींद काफी देर से खुली । हम देख चुके हैं कि 1979 के अंतिम दिनों में संजय गांधी और विद्याचरण शुक्ल को चुनाव लड़ने की इजाजत दी गई जबकि दिल्ली के एक सत्र न्यायालय ने इन दोनों नेताओं को आपातकाल के दौरान किस्सा कुर्सी काश की फिल्म सामग्री को नष्ट करने के लिए आपराधिक षडयंत्र रचने तथा इसके परिणामस्वरूप अन्य आरोपों के सिलसिले में दो वर्ष की सजा दी थी। उनकी अपील उच्चतम न्यायालय में लंबित थी फिर भी उन्हें चुनाव लड़ने की इजाजत दे दी गई।

चुनावों के बाद 1980 के शुरू में जब इंदिरा गांधी भारी बहुमत से दोबारा सत्ता में आई तो संजय गांधी काफी शक्तिशाली हो गए और वे अपने आप मे कानून बन गए थे। उन्होने आतंक कायम कर दिया था। उन्होंने ऐसे नौकरशाहों और केन्द्रीय जांच ब्यूरो के अधिकारियों को प्रताड़ित और अपमानित करना शुरू कर दिया जिन्होंने जनता सरकार के दौरान उनके या उनकी मां श्रीमती इंदिरा गांधी के खिलाफ कार्रवाई करने की हिम्मत की थी। दूसरी ओर, अदालत के फैसले एवं टिप्पणियों को दरकिनार करते हुए ऐसे लोगों को पुरस्कृत और सम्मानित किया गया जिन्होंने संजय गांधी या इंदिरा गांधी का साथ दिया था। इसका एक स्पष्ट उदाहरण सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय के एक पूर्व सचिव का है। शकिस्सा कुसी काश मामले में अदालत में पेश उनके सबूत पर विश्वास नहीं किया गया था। अदालत ने कहा था कि उन्होने सच्चाई को छिपाने का प्रयास किया था। इसके अलावा ये

अधिकारी सर्वोच्च न्यायालय में एक गलत हलफनामा दायर करने के लिए झूठी शपथ लेने के भी अभियुक्त थे। इसके चलते इस फिल्म की सामग्री मुख्य न्यायाधीश तथा खंडपीठ के अन्य सदस्यों को दिखाने के लिए उपलब्ध नहीं हुई। फिर भी उन्हें उड़ीसा से लाकर पहले केन्द्रीय सचिव नियुक्त किया गया और बाद में उन्हें एक राज्य का राज्यपाल बना दिया गया। एक अन्य नौकरशाह बीएस त्रिपाठी के खिलाफ अदालत ने प्रतिकूल टिप्पणियां की थी। सत्र न्यायाधीश ने अपने फैसले में इस अधिकारी के आचरण पर टिप्पणी करते हुए कहा था । खंडन काफी हद तक अभियोजन पक्ष के प्रति विरोधी रूख और विद्याचरण शुक्ल के प्रति उनके रूझान का संकेत देते हैं जिनसे एक गवाह के रूप में उनकी साख खराब होती है। उन्होंने उसी तरह के कृतार्थ करनेवाले उत्तर दिए हैं जैसे घोष ने दिए हैं। इससे इस बात में कोई संशय नहीं रह जाता कि विद्याचरण शुक्ल में उनकी गहरी दिलचस्पी है। इस सबके बावजूद उन्हें प्रधानमंत्री के कार्यालय में संयुक्त सचिव नियुक्त किया गया और उच्च पदों पर होनेवाली नियुक्तियों सहित पुलिस विभाग से जुड़े मामले देखने का जिम्मा सौंपा गया। अदालत ने जिस एस घोष की निंदा की थी उन्हें कैबिनेट मंत्री ज्ञानी जैल सिंह का विशेष सहायक बनाया गया। इस तरह वे तुरंत मुअत्तली से मुक्त हो गए। श्री घोष के बारे में अदालत ने कहा था, ष्इस निष्कर्ष पर पहुंचने में मुझे कोई संकोच नहीं है कि श्री घोष का इंकार गढ़ा हुआ, बेईमान और गलत है। इसलिए यह बचाव के लिए लाभदायक नहीं हो सकता।श अदालत ने संजय गांधी द्वारा लगाए गए सभी आरोपों को यह कहते हुए खारिज कर दिया कि ष्एकमात्र समझदारी वाला निष्कर्ष यही निकाला जाना चाहिए कि ये अभियोग कल्पना की चीज है और गढ़े हुए हैं।

पूर्व में जिस दस्तावेज का जिक्र किया गया है उसमें डेविड वायले ने आगे लिखा हैरू ष्श्रीमती गांधी जनवरी 1980 में सत्ता में वापस आई। उन्होने तत्काल उस प्रशासन को प्रदर्शित किया कि प्रशासन .... सरकार की सेवा करता है न कि कानून की ..... । देश भर में जनता सरकार ने जिन अफसरों की निंदा की थी उनका पुर्नवास किया गया। संकेत दिल्ली में जितना स्पष्ट था उतना और कहीं नहीं था। जेसी भिंडर को पुलिस आयुक्त बना दिया गया था जबकि जनता राज में उनके खिलाफ हत्या का मुकदमा चला था भले ही सजा नहीं हुई थी। बहुत बाद के दिनों में चंद्रशेखर का रवैया इससे मिलता जुलता ही रहा। चंद्रस्वामी के खिलाफ जब मुकदमा चल रहा था और बबलू श्रीवास्तव के साथ उनके संबंधों सहित कई मामलों में उनके खिलाफ जांच पड़ताल चल रही थी तो पूर्व प्रधानमंत्री ने इस तथाकथित तांत्रिक का पक्ष लिये। कानपुर से करीब बीस किलोमीटर दूर विधूर गेस्ट हाउस में पत्रकारों से बातचीत करते हुए श्री चंद्रशेखर जी कहे थे, ष्किसी व्यक्ति पर सिर्फ इसलिए मुकदमा नहीं चलाया जाना चाहिए या उसे परेशान नहीं किया जाना चाहिए कि किसी को उसकी ईमानदारी पर शक है या वह उसके खिलाफ हर किस्म के आरोप लगा रहा है।ष चंद्रस्वामी के निकट समझे जानेवाले चंद्रशेखर जी ने आगे कहे थे, ष्मैं उन्हें व्यक्तिगत रूप से जानता हूं। वह इतने डरपोक है कि एक मच्छर भी नहीं मार सकते । कुत्ते को मारने की बात छोड़िये। बाद में जैसे ख्याल आने पर उन्होंने कहा, ष्सभी आरोपों की जांच होनी चाहिए और सीबीआई इस मामले में अपना काम कर रही है। प्रधानमंत्री पद से हटने के तत्काल बाद पीवी नरसिंहराव को कई आपराधिक मुकदमों का सामना करना पड़ा। इनमें झारखंड मुक्ति मोर्चा रिश्वत कांड, लाखूभाई पाठक धोखाधड़ी मामला, यूरिया घोटाला और सेंट किट्स मागला शामिल है। लगभग इसी समय, अक्तूबर 1996 में एक प्रमुख दैनिक की एक खबर का शीर्षक कुछ इस प्रकार था, ष्किसी आपराधिक मामले में फंसने वाले श्री राव देश के पहले पूर्व प्रधानमंत्री हैं। (दि हिंदुस्तान टाइम्स. 6 अक्तूबर 96)। इन सबके बावजूद वह अच्छे खास समय तक कांग्रेस संसदीय दल के नेता बने रहे। यह वहीं व्यक्ति है जिसने देवगौड़ा के नेतृत्व वाले तीसरे मोर्चे की सरकार को पूर्ण समर्थन देने की घोषणा करते हुए लोकसभा मे भाषण दिया था तो विदेश मंत्री इंद्र कुमार गुजराल ने बड़ी ही गर्मजोशी से इन्हें बधाई दी थी। स्पष्टतः वे इस समर्थन से काफी उत्साहित थे। उस वक्त सारा देश टेलीविजन पर लोकसभा की कार्यवाही देख रहा था । यही इन्द्र कुमार गुजराल जब प्रधानमंत्री बने तो वे चाहते थे कि जनता ऐसे लोगों का सामाजिक बहिष्कार करे जिनके खिलाफ भ्रष्टाचार के आरोप हैं द्य साप्ताहिक पत्रिका आउटलुक ने 14 अगस्त 1997 के अंक में एक आलेख प्रकाशित किया था जिसका शीर्षक था, ष्कानून बनाने वाले या तोड़नेवालेष। इस आलेख में चार मंत्रियों सहित 39 सांसदों के नामों का खुलासा किया गया था जिनके खिलाफ आपराधिक मुकदमें चल रहे थे। यह सही है कि इसमें कुछ आरोप झूठे या राजनीति से प्रेरित हो सकते हैं लेकिन पूरा हाल जानने के लिए हम कुछ मामलों का अध्ययन कर सकते हैं। इनमें केन्द्र के एक मंत्री, गृह राज्य मंत्री और उनके पुत्र, एक प्रमुख राज्य के राज्यपाल और सत्तारूढ़ पार्टी के एक लोकसभा सदस्य के मामले शामिल हैं। उत्तर प्रदेश में मुलायम सिंह यादव की सरकार के अल्पमत में आ जाने के बाद बहुजन समाज पार्टी की नेता सुश्री मायावती 2 जून 1995 को दिल्ली से लखनऊ पहुंची। उन्हें दूसरे दिन राज्य के मुख्य मंत्री के रूप में शपथ दिलाई जानेवाली थी। उसी दिन शाम में मुलायम सिंह यादव के समर्थकों ने बसपा के कई विधायकों पर कथित रूप से हमले किए और कुछ का अपहरण कर लिया। यह खबर तीन तारीख को सभी प्रमुख अखबारों में सुर्खियों में थी। जिस वक्त यह कथित घटना घटी उस समय मायावती यूपी गेस्ट हाउस के सुइट नंबर एक में थीं और अपनी पार्टी के विधायकों तथा अन्य समर्थकों के साथ बैठक कर रही थीं। इस घटना के बाद उत्तर प्रदेश सरकार ने 4 जून 1995 को गृह विभाग की एक सामान्य अधिसूचना के जरिए राजस्व बोर्ड के अध्यक्ष रमेश चंद्र को इस घटना से संबंधित आरोपों की जांच का जिम्मा सौंपा। रमेश चंद्र ने 4 जुलाई 1995 को अपनी रिपोर्ट सरकार को सौंप दी। इसमें इस घटना में मुलायम सिंह यादव और बेनी प्रसाद वर्मा के शामिल होने की पुष्टि कर दी गई। अखबारों और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया में भी इस आशय की खबरें आई थीं। लोकसभा में विपक्ष के नेता अटल बिहारी वाजपेयी चाहते थे कि इस रिपोर्ट की प्रति सदन के पटल पर रखी जाए। आखिरकार यह रिपोर्ट प्रेस को जारी कर दी गई और यह मांग की गई कि मुलायम सिंह यादव को तत्काल मंत्री पद से इस्तीफा दे देना चाहिए । यादव ने इस्तीफा की मांग को साफ तौर पर खारिज कर दिया। उनका कहना था कि पूरी रिपोर्ट राजनीति से प्रेरित है। मार्क्सवादी कम्युनिष्ट पार्टी के महासचिव हरकिशन सिंह सुरजीत ने मुलायम सिंह यादव के समर्थन में आगे आकर कहा, "एक ऐसे अधिकारी के निष्कर्ष पर भरोसा नहीं किया जा सकता जिसे मुलायम सिंह यादव के मुख्यमंत्रित्व में प्रोन्नति नहीं दी गई थी। ऋऋ लखनऊ में 28 जुलाई 1996 को समाजवादी पार्टी के राष्ट्रीय सम्मेलन को संबोधित करते हुए रक्षा मंत्री मुलायम सिंह यादव, उनके मंत्रिमंडलीय सहयोगी बेनी प्रसाद वर्मा तथा अन्य नेताओं ने न सिर्फ विपक्ष के नेता सहित अपने विरोधियों को ललकारा और धमकी दी बल्कि प्रेस को भी नहीं बख्शा। सम्मेलन में एक लाल दस्ता (रेड ब्रिगेड) के गठन की भी घोषणा की गई और एलान किया गया कि इसके सदस्यों के हाथों में लाठी होगी, इस तरह, केंद्रीय स्तर पर बाहुबल की राजनीति की शुरूआत हो चुकी थी। यहां यह उल्लेखनीय है कि ईमानदारी और निष्पक्षता के लिए श्री रमेश चंद्र की काफी ख्याति है और उनके किसी प्रकार से प्रेरित होने की बात क्या इसलिए की गई कि इस रिपोर्ट के सार्वजनिक हो जाने के बाद उन्हें मुख्य सचिव नहीं बनाया गया? प्रसंगवश, यह रिपोर्ट सिर्फ औपचारिक जांच पर आधारित नहीं थी और न ही यह मौके से इकट्ठा किए गए तथ्यों का संग्रह भर था। यह न सिर्फ बसपा विधायकों के

हलफनामों पर आधारित था बल्कि ड्यूटी पर तैनात उच्च प्रशासनिक एवं पुलिस अधिकारियों तथा कुछ अन्य लोगों के प्रमाण पर भी आधारित था। इस घटना का उस समय जी टीवी पर प्रसारण भी हुआ था तथा प्रमुख भारतीय समाचार पत्रों में भी इसकी रिपोटिंग हुई थी। गेस्ट हाउस के अधिकारियों ने इस बात का विस्तार से जिक्र किया कि हुड़दंगियों ने किस तरीके से गेस्ट हाउस की बिजली काट दी और कैसे वहां के कर्मचारी इतने सन्न रह गए थे कि वे जेनरेटर चलाने की भी हिम्मत नहीं जुटा पाए। इस रिपोर्ट में लखनऊ के वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक के साथ–साथ वरिष्ठ पुलिस अधिकारियों एवं कुछ नौकरशाहों पर अपनी ड्यूटी निभाने में असफल रहने के आरोप लगाए गए। यहां तक कि एक जुलाई 1995 की रात ही लखनऊ में राजनीतिक माहौल काफी गर्म हो गया था और मुहर्रम के कारण भी शहर काफी संवेदनशील बना हुआ था। इतना सब कुछ होते हुए भी लखनऊ के एसएसपी का रातों–रात अचानक तबादला कर दिया गया। जिस अधिकारी को यहां इस पद पर नियुक्त किया गया उससे 2 जुलाई 1995 को अपना पदभार संभालने को कहा गया लेकिन वह अधिकारी खुद इसके लिए इच्छुक नहीं था। यह अधिकारी अपनी पिछली पोस्टिंग के दौरान पहले ही बसपा के कोप का शिकार हो चुका था और वह जानता था कि उस समय लखनऊ में उससे क्या उम्मीद की जा रही थी। इसलिए स्वाभाविक रूप से वह समाजवादी पार्टी और मुख्यमंत्री मुलायम सिंह यादव के रोष को टालने के लिए चिंतित था। असल में, थाने में दर्ज शिकायतों के आधार पर खुद रमेश चंद्र के सुझाव के अनुसार इस मामले की सीआईडी जांच कराने के आदेश दिए गए। सीआईडी ने लखनऊ में सत्र न्यायाधीश की अदालत में इस मामले में एक मुकदमा दर्ज किया। इसमें आपराधिक षडयंत्र सहित भारतीय दंड संहिता की विभिन्न धाराओं और अनुसूचित जातिध्जनजाति कानून के तहत रक्षामंत्री मुलायम सिंह यादव, संचार मंत्री बेनी प्रसाद वर्मा और विधानसभा के तत्कालीन अध्यक्ष धनी राम को अभियुक्त बनाया गया था। (दि टाइम्स ऑफ इंडिया, 27 जुलाई 96)।

यह सही है कि कानून द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार अदालत भविष्य में अपना अंतिम फैसला सुनाती है। हालांकि, प्रत्यक्ष सबूतों के आधार पर रमेश चंद्र कमेटी ने भारत सरकार के रक्षा मंत्री और संचार मंत्री को आरोपित किया था और राज्य सरकार के अपराध अनुसंधान विभाग ने जांच पड़ताल के दौरान एकत्र किए गए सबूतों के आधार पर आरोप पत्र दाखिल किया था। इस बीच लखनऊ के सत्र न्यायाधीश ने 27 मई 1997 को अपने निर्णय में कहा कि समाजवादी पार्टी के नेताओं के खिलाफ प्रथम दृष्टि में अपराध का कोई मामला नहीं बनता और इस मामले की सुनवाई पहले किसी न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा की जानी चाहिए। यह ठीक भी है, क्योंकि कथित घटना भ्रष्टाचार से जुड़ी तो नहीं ही थी बल्कि यह धारा 120बी (आपराधिक साजिश) 147, 148, 323, 353 और 363 (बसपा विधायकों का अपहरण) का मामला था। अब यह बात समझ से परे है कि सीआई डी ने भ्रष्टाचार का मामला क्यों दायर किया। रक्षा मंत्री देश की दश लाख सशस्त्र सेनाओं को नेतृत्व करता है जो देश की क्षेत्रीय अखंडता की रक्षा के लिए जिम्मेदार हैं। अगर उनके मंत्री इस तरह के आपराधिक आरोपों के सिलसिले में अदालत में उपस्थित होंगे तो उनके बीच क्या संदेश जाता? इसके कुछ ही दिनों के बाद तत्कालीन प्रधानमंत्री एचडी देवगौड़ा ने मेरठ में जनता दल की एक विशाल रैली को संबोधित करते हुए उत्तर प्रदेश की जनता को याद दिलाया कि उस राज्य का देश के लिए कम से कम सात प्रधानमंत्री देने का गौरवशाली इतिहास रहा है।

मोहम्मद तसलीमुद्दीन को जून 1996 में देवगौड़ा सरकार में गृह राज्य मंत्री बनाया गया। इलेक्ट्रॉनिक मीडिया की रिपोर्टिंग और विपक्ष के लगातार विरोध के कारण करीब एक महीने बाद ही उन्हें मंत्री पद से जाना पड़ा था। लेकिनि इससे पहले सामान्य तौर पर इनका इस आधार पर बचाव किया गया कि उन्हें सजा नहीं हुई है और ये मामले राजनीति से प्रेरित हैं। अंत में यह कहकर भी उनका बचाव किया गया कि गृह मंत्रालय में उन्हें जो काम आवंटित किए गए है वे संवेदनशील किस्म के नहीं हैं। यकीनन वे श्री लालू प्रसाद यादव के आदमी थे और जनता दल के विभाजन के बाद उन्होने लालू का साथ दिया था और राष्ट्रीय जनता दल में रहे थे। यह चिंता देश की मौजूदा राजनीतिक स्थिति से है जिसमें तसलीमुद्दीन जैसे रिकार्ड वाला व्यक्ति गृह मंत्रालय में मंत्री बन सकता है। अररिया या पूर्णिया में तसलीमुद्दीन से संबंधित पुलिस रिकार्ड देखना तो संभव नहीं हो सका और न ही पटना में सीआईडी के मुख्यालय या बिहार सरकार के गृह विभाग से कोई जानकारी मिली। मोहम्मद तसलीमुद्दीन के कथित अपराधिक रिकार्ड के बारे में खास विवरण तो इन्हीं से मिल सकता है फिर भी उनके बारे में जानकारी के लिए बिहार विधानसभा की उस सर्वदलीय कमेटी की रिपार्ट देखी जा सकती हैं जिसका गठन विधानसभा अध्यक्ष ने 27 फरवरी 1986 को किया था। यह समिति तसलीमुद्दीन पर लगाए गए आरोपों और खासकर खुद तसलीमुद्दीन द्वारा फरवरी और मार्च 1986 में अररिया पुलिस के खिलाफ की गई शिकायतों की जांच के लिए बनाई गई थीं।

बिहार विधानसभा की समिति ने 13 जुलाई 1988 को अपनी रिपोर्ट दी। उस वक्त मोहम्मद तसलीमुद्दीन पूर्णिया जिले के जोकीहाट निर्वाचन क्षेत्र से जनता पार्टी के विधायक थे। उन्होंने आपराधिक दंड संहिता की धारा 88 के तहत अदालत के आदेश के संबंध में अररिया शहर में उनकी संपति की कुर्की के सिलसिले में अररिया पुलिस द्वारा की गई ज्यादतियों की शिकायत की थी। पुलिस ने मोहम्मद तसलीमुद्दीन के खिलाफ अररिया में दर्ज आपराधिक मामलों के सिलसिले में यह कारर्वाई की थी। यह बात महत्वपूर्ण है कि विधायकों की सर्वदलीय समिति ने मोहम्मद तसलीमुद्दीन के खिलाफ गिरफ्तारी वारंट और कुर्की जब्ती को कानूनी रूप से वैध ठहराया था। हालांकि, समिति ने यह महसूस किया था कि कुर्की जब्ती के मामले मे पुलिस थोड़ी उतावली थी और उसे तसलीमुद्दीन को गिरफ्तार करने के लिए थोड़ा और प्रयास करना चाहिए था। अलबत्ता, इससे भी ज्यादा महत्वपूर्ण यह है कि इस रिपोर्ट में अपहरण और डकैती जैसे अनेक जघन्य मामलों में तसलीमुद्दीन की संलिप्तता के आरोपों के बारे मे विस्तार से बताया गया है। इनमें अररिया अस्पताल के डाक्टर एन कुमार के घर में 1983 में और इसी अस्पताल के डाक्टर सलाउद्दीन के घर 8 फरवरी 1986 को हुई डकैतियों का मामला भी है। पूर्णिया के पुलिस अधीक्षक ने 1986 में सर्वदलीय समिति के समक्ष अपनी गवाही में कहा कि तसलीमुद्दीन पर 1983 में डाक्टर एन कुमार के घर में हुई डकैती के मामले में संदेह था और श्हमेशा की तरह उन्होने इस मामले को राजनीतिक रंग देने का प्रयास किया तथा भूख हड़ताल पर बैठ गए। पुलिस अधीक्षक ने यह भी बताया कि उन्हें यह भी पता चला है कि तसलीमुद्दीन एक अपराधी है और वे दूसरे अपराधियों को भी संरक्षण देते है। इस मामले में तसलीमुद्दीन के खिलाफ अभियोग पत्र दाखिल नहीं हुआ लेकिन उन पर संदेह है। विधायक हलीमुद्दीन अहमद ने भी इस बात की पुष्टि की थी। उन्होने समिति से कहा कि डाक्टर एन कुमार के घर में हुई डकैती के मामले में पुलिस का खोजी कुत्ता पुलिस पार्टी को तसलीमुद्दीन के घर ले गया था। इस मामले में अपराधियों ने परिवार की महिलाओं के साथ दुर्व्यवहार किया. था। अररिया अधिववक्ता संघ के सचिव गणेश प्रसाद मंडल ने भी समिति के समक्ष इसी तरह का ब्यौरा दिया था।

अररिया अस्पताल के चिकित्सा अधिकारी डाक्टर सलाउद्दीन के घर में 8 फरवरी 1986 की रात तकरीबन नौ बजे किसी के बाहर से पुकारने की आवाज आई और उसने दरवाजा खोलने को कहा। इस व्यक्ति ने अपना नाम शामिया बताया था और कहा कि मोहम्मद तसलीमुद्दीन ने उसे भेजा है। जैसे ही उन्होने दरवाजा खोला डकैत घर में घुस आए और उन्होंने रिवाल्वर की नोंक पर उन्हें एवं उनके परिवार के अन्य सदस्यों के हाथ पांव रस्सी से बांध दिए और घर को लूट लिया। इस मामले की छानबीन कर रहे पुलिस उपाधिक्षक ने समिति के समक्ष संकेत दिया कि इस मामले में तसलीमुद्दीन एक श्सस्पेक्टश (संदिग्ध) है। पुलिस के खोजी कुत्ते ने पुलिस दल को उनके घर पहुंचाया और वहां एक आदमी को दबोच लिया। तसीमुद्दीन और उनके लोग इस पर बौखला गए और जिस व्यक्ति ने कुत्ते को पकड़ा हुआ था उससे रिवाल्वर की नोंक पर जबरदस्ती एक कागज पर लिखवा लिया कि कुत्ता प्रशिक्षित नहीं है। एक अन्य व्यक्ति ने प्रोबेशनरी उपनिरीक्षक निरंजन प्रसाद मंडल तथा एक हवलदार को धमकाया। मौके पर जब पुलिस बल पहुंचा तब जाकर इन पुलिसकर्मियों को बचाया जा सका। मंडल ने विधायकों की सर्वदलीय समिति के समक्ष इन तथ्यों की पुष्टि की थी।

बिजली विभाग के सहायक अभियंता और सुपरवाइजर की रिपोर्ट के आधार पर सर्वदलीय समिति की रिपोर्ट में दंगा करने, लोक सेवकों के साथ दुर्व्यवहार करने, हत्या का प्रयास करने आदि के आरोपों का भी जिक्र किया गया है। 9 फरवरी 1986 की घटना के संबंध में यह मामला दर्ज किया गया। आरोप है कि तसलीमुद्दीन ने 9 फरवरी 1986 को बिजली विभाग के दो अधिकारियों को अपने घर बुलाया, उनकी कमर में रस्सा बांध कर उन्हें शहर में घुमाया गया। उल्लेखनीय है कि समिति ने अपनी रिपोर्ट (पैरा 5) में इन आरोपों को सही ठहराया है। समिति की राय में यह एक गंभीर और अनुचित कारर्वाई थी। समिति का मानना था कि सरकारी कर्मचारियों की ड्यूटी के निर्वाह मे अवरोध उत्पन्न करना और उन्हें अपमानित करना बिल्कुल गलत है। मामला संख्या 43ध्86 दिनांक 11 फरवरी 1986 रू अनुचित तरीकों से धन ऐंठने, जबरदस्ती बंद करके रखने और गंभीर रूप से जख्मी करने या जान मारने की धमकी देने की शिकायत श्री ज्योतिर्मय राय की एक रिपोर्ट के आधार पर दर्ज की गई थी। इस अपराध के . तहत दस वर्ष की सजा है और यह अपराध गैर जमानती है। इस मामले में तसलीमुद्दीन और अन्य व्यक्तियों का नाम आरोपियों के रूप में दर्ज किया गया। यह इनके घर हुई उस घटना से भी जुड़ा हुआ है जिसमें डॉक्टर सलाउद्दीन के घर हुई डकैती के सिलसिले में एक पुलिस दल वहां गया था।

मामला संख्या 44ध्86 दिनांक 11 फरवरी 1986 रू अररिया के डाक्टर एस आर झा की एक शिकायत के आधार पर 11 फरवरी को ही एक और मामला दर्ज किया गया। डॉक्टर झा का कहना था कि उन्हें तसलीमुद्दीन के घर बुलाया गया और उनके साथ दुर्व्यवहार किया गया उन्होंने दंगा करने, जबरन रोकने, अपमानित करने और शांति भंग करने आदि अपराधों की रिपोर्ट लिखवाई। मामला संख्या 45ध्86 दिनांक 13 फरवरी 1986 रू डाक्टर एस के झा की एक रिपोर्ट के आधार पर धोखाधड़ी, जालसाजी और आपराधिक षडयंत्र के आरोपों के तहत दर्ज किया गया। इस मामले में तसलीमुद्दीन, मुन्ना सेन और असीम को अभियुक्त बनाया गया। अररिया के अनुमंडलाधिकारी (एसडीओ) ने सर्वदलीय समिति को बताया कि 1986 तक तसलीमुद्दीन को नौ मौकों पर जेल भेजा जा चुका था और चोरी के एक मामले में उन्हें न्यायिक हिरासत में रखा जा चुका है। उन्होने यह भी बताया कि तसलीमुद्दीन की गतिविधियों के बारे में एक विशेष रिपोर्ट सरकार को भेजी जा चुकी है। अररिया में सर्वदलीय समिति की सुनवाई के दौरान मोहम्मद तसलीमुद्दीन के खिलाफ कुछ अन्य गंभीर आरोप लगाए गए इनमे से कुछ का संक्षिप्त ब्यौरा इस प्रकार है अररिया को श्रीमती जल्फा ने समिति को बताया कि तसलीमुद्दीन अपने गुंडों के जरिए नियमित रूप से लोगों से पैसे ऐंठता है। अररिया स्थित महिला डिग्री कॉलेज के सचिव की पत्नी श्रीमती अरूणा झा ने विधायकों की सर्वदलीय समिति को बताया कि तसलीमुद्दीन ने उनके कालेज में डकैती डलवाने की योजना बनाई थी। उनके पति शहर से बाहर गए हुए थे और वे अकेली थी। उन्हें चाकू से घायल कर दिया गया।

• काली बाजार की बिमला देवी ने समिति को बताया कि विधायक तसलीमुद्दीन के कारण लड़कियों ने स्कूल जाना छोड़ दिया है क्योंकि उनके साथ छेड़खानी बहुत आम है। लड़कियां इतनी आतंकित है कि उन्हें रातों को नींद नही आती।

• अररिया के बानेश्वर वर्मा ने समिकित को बताया कि तसलीमुद्दीन जब भी शहर में होते हैं इस तरह के अपराधों की संख्या बढ़ जाती है। जिनकी चर्चा ऊपर की गई है औ जब कभी वे शहर में नहीं होते हैं, इलाके में शांति रहती है। चिकित्सक रघुनाथ मिश्र ने समिति को बताया कि तसलीमुद्दीन उनसे शलिंडीर पिनाडीर इजेक्शन लेते हैं क्योंकि वे यौन रोग से पीड़ित हैं और उनका नौकर नियमित रूप से उनके लिए संथाल आदिवासी लड़कियां उपलब्ध कराता है। डाक्टर सलाउद्दीन के घर 8 फरवरी 1986 को हुई डकैती और बिजली विभाग के इंजीनियों के साथ किए गए दुर्व्यवहार के बाद 9 फरवरी 1986 को शहर के डाक्टरों, इंजीनियरों, अधिवक्ताओं, अराजपत्रित कर्मचारियों और शिक्षकों ने आंदोलन शुरू कर दिया और काम ठप्प कर दिया। जिलाधिकारी और पुलिस अधीक्षक ने.उस दिन अररिया और पूर्णिया का दौरा किया तथा आंदोलनकारियों को आश्वासन दिया कि कानून एवं व्यवस्था की स्थिति बनाए रखने के लिए हरेक उपाय किए जाएंगे। इसके बाद ही जिला प्रशासन ने 11 फरवरी 1986 को निर्देश जारी किया कि खोजी कुत्ते की सेवा ली जानी चाहिए। खोजी कुत्ते ने डॉक्टर सलाउद्दीन के घर पर अपराधियों के छूट गए एक जोड़ी जूते और कुछ अन्य सामानों को सूंघने के बाद पुलिस दल को तसलीमुद्दीन के घर पहुंचा दिया।

इन सब घटनाओं के बाद गिरफ्तारी के डर से मोहम्मद तसलीमुद्दीन भाग कर पटना पहुंच गए। स्थानीय पुलिस ने अदालत से तसलीमुद्दीन के खिलाफ गिरफ्तारी का वारंट प्राप्त किया और 13 फरवरी 1986 को एक पुलिस पार्टी उन्हें गिरफ्तार करने पटना पहुंची लेकिन उसे सफलता नहीं मिली। इसके बाद पुलिस ने 15 फरवरी 1986 को अदालत से अपराध प्रक्रिया संहिता की धारा 83 के तहत कुर्की जब्ती का आदेश प्राप्त किया। इस धारा में उन व्यक्तियों से निपटने की प्रावधान है जो किसी आपराधिक मामले में फरार हो गया है। अदालत के इस आदेश को सोलह फरवरी 1986 को तामील किया गया। सर्वदलीय समिति के समक्ष पेश किए गए साक्ष्य के मुताबिक घर पर ज्यादातर सामान 15 फरवरी की रात वहां से हटा लिए गए थे।

6 अप्रैल 1996 को बिहार के स्थानीय आयुक्त एमएल मजूमदार ने पटना उच्च न्यायालय में एक याचिका दायर की जिसमें उन्होंने मोहम्मद तसलीमुद्दीन पर 25 फरवरी 1996 को बिहार भवन में उनके साथ दुर्व्यवहार करने का आरोप लगाया। इंडियन एक्सप्रेस की 22 जून 1996 की एक रिपोर्ट के मुताबिक पटना उच्च न्यायालय ने मोहम्मद तसलीमुद्दीन को निर्देश दिया कि 25 अक्तूबर 1994 के अदालत के आदेश का उल्लंघन करने के आरोप में क्यों नहीं उनके खिलाफ अदालत की अवमानना का मामला चलाया जाए। एक जनहित याचिका पर अदालत ने अपने आदेश में स्पष्ट कहा था कि सिर्फ उन्हीं व्यक्तियों को बिहार भवन में ठहरने के लिए स्थान दिया जाना चाहिए जिन्हें सक्षम अधिकारी ने इसके लिए अधिकृत किया हो, किसी और को नहीं। अदालत

ने यह भी निर्देश दिया था कि किसी व्यक्ति द्वारा स्थानीय आयुक्त पर दबाव नहीं डाला जाना चाहिए और इसका उल्लंघन होने पर ऐसे व्यक्ति को अदालत की नजर में लाया जाए। मोहम्मद तसलीमुद्दीन जब मंत्री नहीं रहे तो किसी करतार सिंह ने अगस्त 1996 में स्थानीय थाने में एक शिकायत दर्ज कराई कि पूर्व मंत्री ने उन्हें डाक बंगले में बुलाया और पांच लाख रूपये देने की मांग की। करतार सिंह बिहार के किशनगंज में एक निजी मेडिकल कालेज चलाते हैं। यहीं से तसलीमुद्दीन ने 1996 में लोकसभा का चुनाव जीता था। करतार सिंह ने आरोप लगाया कि रूपया देने से इंकार करने पर उनके साथ दुर्व्यवहार किया गया और अपहरण की कोशिश भी की गई। केन्द्र सरकार में गृह राज्य मंत्री रहे एक व्यक्ति के बारे में जिम्मेदार नागरिकों के आरोप ऐसे हैं। मोहम्मद तसलीमुद्दीन ने इन आरोपों से इंकार किया और कहा कि उन्हें फंसाया जा रहा है। इस मामले में उन्होंने माकपा के वरिष्ठ नेता पर आरोप लगाए। मुमकिन है कि इनमें से कुछ आरोप बढ़ा–चढ़ाकर लगाए गए हों। कुछ आरोप राजनीति से प्रेरित भी हो सकते हैं। लेकिन, क्या यह हमारे संसदीय लोकतंत्र और कानून का मजाक नहीं कि इस तरह के रिकार्ड वाले किसी व्यक्ति को गृह मंत्रालय में राज्य मंत्री बना दिया जाता है? इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि ये आरोप विधायकों की एक सर्वदलीय समिति के समक्ष लगाए गए हैं। अनेक गंभीर अपराधों में संलिप्तता के आरोपों के अलावा इनके खिलाफ अररिया में एक जनआंदोलन चलाया गया। इतना ही नहीं, उनके फरार होने की रिपोर्ट के आधार पर अदालत ने आपराधिक प्रक्रिया संहिता के तहत उनकी संपति की कुर्की जब्ती के आदेश जारी किए।

यही कारण है कि इस देश की जनता का विश्वास आपराधिक न्याय व्यवस्था से लगभग उठ गया है। आज यह धारणा बन गई है कि अच्छे राजनीतिक संपर्क वाले लोगों के खिलाफ कानून कभी कोई काम नही करता है। ऐसे लोग खुद ही कानून बन गए हैं। मोहम्मद तसलीमुद्दीन के खिलाफ दर्ज मामले इसके जीते–जागते उदाहरण हैं। बाद में तसलीमुद्दीन अपने बेटे सरफराज अहमद को बिहार में राबड़ी देवी के विशालकाय मंत्रिमंडल में शामिल कराने में सफल हो गए। खुद सरफराज अहमद कथित रूप से अनेक आपराधिक मामलों का सामना कर रहे थे। इनमें अररिया के एक एसडीओ की पिटाई से लेकर लूट तक के मामले शामिल हैं। सरफराज अहमद ने 1996 के लोकसभा चुनाव के दौरान कथित रूप से अपने पिता के खिलाफ प्रदर्शन कर रहे लोगों पर गोलियां चलाई । दि इंडियन एक्सप्रेस ने 8 जुलाई 1996 को खबर दी थीरू ष्सरफराज के संरक्षण में चलने वाला गिरोह लंबे समय से किशनगंज–अररिया मार्ग पर ट्रक और कार ड्राइवरों के लिए दुःस्वप्न बना हुआ है। दिसंबर 1992 में इलाके में सांप्रदायिक दंगे के समय तक उसने कोई बड़ा कांड नहीं किया था। लेकिन इलाके में सांप्रदायिक दंगे के दौरान उसकी भूमिका गजब की थी। .. .. वह अपनी मोटरसाइकिल को हिन्दुओं के एक गांव से दूसरे गांव में दौड़ता रहा और झोपड़ियों एवं दुकानों में आग लगाता रहा .... उसे गिरफ्तार किया गया और दंगा करने के सात मामलों में वह डेढ़ महीने तक भागलपुर जेल में रहा.... इस वर्ष सात मई को मतदान के दिन उसने किशनगंज के तेहरागछा कस्बे में अफसर इंचार्ज को पटक दिया और उनकी सरकारी रिवाल्वर छीन ली। उसके वकील ने इन आरोपों का खंडन किया और कहा कि उसे गलत तरीके से फंसाने की कोशिश की जा रही है। अखबार ने आगे लिखा कि उसके खिलाफ दो और मामले लंबित हैं। इनमें एक अररिया में तथा दूसरा जोकिहाट में चल रहा है। इन दोनों मामलों में उसने कथित रूप से दूसरों को बाधा पहुंचाई और हमला किया।

एक प्रमुख राज्य के राज्यपाल की संलिप्तता

उत्तर प्रदेश के राज्यपाल मोतीलाल वोरा को जब हवाला मामले में कथित रूप से शामिल होने के आरोप में इस्तीफा देना पड़ा तब रोमेश भंडारी ने देश के इस सबसे बड़े राज्य के राज्यपाल का पद संभाला। 28 दिसंबर 1995 को राष्ट्रपति शंकरदयाल शर्मा ने नई दिल्ली के राष्ट्रपति भवन में राज्यपालों के दो दिवसीय सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए इस बात पर जोर दिया कि राज्यपालों को निष्पक्ष व्यवहार करना चाहिए और साथ ही पार्टी के साथ अपनी निष्ठा व संबंद्धता से ऊपर उठकर जनता के प्रतिनिधि के रूप में काम करना चाहिए। इसके लिए जरूरी है कि राज्यपाल के पद की गरिमा और प्रतिष्ठा निश्चित तौर पर बरकरार रखी जाए और इसमें आशापूर्ण तरीके से वृद्धि की जाए । पूर्व राष्ट्रपति आर वेंकटरामन ने अपनी पुस्तक श्जब मैं राष्ट्रपति थाश में लिखा है –

– संविधान के तहत राज्यपालों से राज्य के प्रधान के रूप में उचित एवं निष्पक्ष तरीके से काम करने की अपेक्षा की जाती है। संविधान सभा की बहसों के दौरान इस बात पर जोर दिया जाता था कि राज्यपाल की भूमिका राज्य के गाइड, दार्शनिक और मित्र के रूप में होनी चाहिए।

रोमेश भंडारी भारतीय विदेश सेवा में लंबे समय तक काम करने के बाद विदेश मंत्रालय में सचिव के पद से रिटायर हुए और कांग्रेस में शामिल हो गए। उन्होने 1991 में दक्षिण दिल्ली से लोकसभा का चुनाव भी लड़ा लेकिन असफल रहे। 1991 में जब वे अखिल भारतीय कांग्रेस कमेटी के विदेश विभाग के संयोजक थे तो उन्होनें अदनान खशोगी से उनके यहां आने पर मुलाकात की थी। भंडारी ने इंडिया टुडे (28 फरवरी 1991) को बताया श्मैंने अदनान खशोगी से मध्य एशिया के बारे में बातचीत की। मुझे ऐसा कोई कारण नजर नहीं आता जिसकी वजह से मुझे उनसे नहीं मिलना चाहिए। हां, इसमे कुछ भी गलत नहीं है। लेकिन अदनान ,खशोगी चंद्रास्वामी के मेहमान के रूप में यहां आए थे। दो आपराधिक मामलों में उनकी तलाश थी। इनमें सेंट किट्स का भी मामला है। केन्द्र में विश्वनाथ प्रताप सिंह की सरकार बनने के तत्काल बाद चंद्रास्वामी देश छोड़कर चले गए थे और नवंबर 1991 में कांग्रेस के समर्पन से चंद्रशेखर की सरकार बनी तब वे भारत आए। भारत की धरती पर कदम रखने के पहले उन्होंने अग्रिम जमानत ले ली थी। इसकी पुष्टि दिसंबर 1991 मे हुई और उन्होने सेंट किट्स मामले में सीबीआई द्वारा पूछताछ के लिए जारी किए गए नोटिसों की अवज्ञा की। अदनान खशोगी जब अपने दो बेटों के साथ भव्य डीसी 10 विमान से उतरे तो हवाई अड्डे पर माला पहनाकर उनका स्वागत करने वालों में कैलाश नाथ अग्रवाल उर्फ मामाजी भी थे। वे चंद्रास्वामी के काफी करीबी सहयोगी थे और सेंट किट्स मामले में एक अभियुक्त भी । चंद्रास्वामी और अदनान खशोगी के साथ रोमेश भंडारी का संबंध काफी पुराना। 1986 में खशोगी ने रोमेश भंडारी के बेटे की शादी में हिस्सा लिया था और इस बात की चर्चा थी कि सउदी अरब का यह हथियार का सौदागर जल्द ही भारत के साथ व्यापार करने वाला है।

त्रिपुरा के राज्यपाल के रूप में 'सेंट किट्स जैसे षडयंत्र में श्री भंडारी की कथित संलिप्तता सुर्खियों में रहीं। यह षडयंत्र न सिर्फ भाजपा नेताओं को बदनाम करने के लिए किया गया था बल्कि कांग्रेस के कुछ लोग भी निशाने पर थे। 1993 में यह साजिश हर्षद मेहता के वकील और एक स्विस नागरिक की मिलीभगत से रची गई थी। यह लालकृष्ण आडवाणी व दूसरे लोगों को फंसाने की साजिश थी। इसमें स्विस नागरिक, फ्रैंकों सरतोरी के शपथपत्र के रूप में एक सबूत था। इसमें उसने कहा था कि वह हर्षद मेहता के लिए विदेश में काम करता है। शपथपत्र के मुताबिक यह पूरी राशि हर्षद मेहता से प्राप्त हुई थी। स्टेट्समैन में

प्रकाशित इस आशय की खबरों पर भंडारी ने एक बयान जारी कर प्रतिक्रिया जताई थी। यह बयान जितने सवालों का जवाब देता था उससे ज्यादा सवाल खड़े करता था। उन्होने कहा था कि वे हर्षद मेहता के वकील रणधीर जैन को श्वैसे ही जानते थे। इसके बावजूद यह तथ्य था कि जैन ने दूर त्रिपुरा में भंडारी से संपर्क किया था जहां वे राज्यपाल के ऊंचे ओहदे पर थे। जैन का उद्देश्य हर्षद मेहता के कथित बड़े हवाला लेन देन के बारे में उनसे श्सलाह लेना था। भंडारी ने इस काम में मदद की और लंदन व जीनिवा के भारतीय मिशनों में कुछ अधिकारियों को पत्र लिखा ताकि वे श्कुछ दस्तावेजों की जांच के सिलसिले में रणधीर जैन की मदद करें और फिर उनकी सत्यता की संपुष्टि करें। भंडारी के बयान के मुताबिक जैन सरतोरी के दस्तखत वाला एक शपथपत्र लेकर उनके पास गए थे और श्विदेश में हमारे मिशन द्वारा इसकी सत्यता की पुष्टि नहीं की गई थी। स्टेट्समैन ने बाद में (4 सितंबर 1999 को) भंडारी और जैन की कथित बातचीत के टेप का अंश प्रकाशित किया। इस बातचीत से कथित तौर पर उस साजिश का पता चलता है जो इन शपथपत्रों के जरिए कुछ विपक्षी नेताओं को बदनाम करने के लिए रची गई थी। यह मामला सितंबर 1993 में प्रतिभूति घोटाले की जांच के लिए बनी संयुक्त संसदीय समिति (जेपीसी) को सौंप दिया गया था। रणधीर जैन ने भी जेपीसी के समक्ष बयान देने की पेशकश की थी। जेपीसी के भाजपाई सदस्यों को लिखे गए पत्र के रूप में जारी एक प्रेस बयान में जैन ने स्वीकार किया था कि वे त्रिपुरा के राज्यपाल के काफी नजदीकी हैं। भंडारी को गोवा भेज दिया गया था पर संयुक्त मोर्चे की सरकार ने उन्हें तुरंत उत्तर प्रदेश का राज्यपाल बना दिया था।

इस तरह, और इससे भी बड़ी बात यह है कि भंडारी ने खुद ही स्वीकार किया था कि उन्होने लंदन और जीनिवा में भारतीय दूतावासों के अधिकारियों के नाम हर्षद मेहता के वकील की मदद करने के लिए चिट्ठी लिखी थी जबकि इस वकील के बारे में उन्होने दावा किया था कि उसे वे यूं ही जानते थे। वकील को यह मदद एक ऐसे जांच के लिए दी जानी थी जो खुद ही शंका पैदा करने वाला है। उन्होने अधिकारियों से उन दस्तावेजों की संपुष्टि करने के लिए भी कहा था जो वकील ने एकत्र किया था। अगर भारतीय मिशनों के अधिकारियों ने विदेश मामलो के पूर्व सचिव रह चुके एक राज्यपाल के आग्रह पर इन दस्तावेजों को जाने–अनजाने में संपुष्ट कर दिया होता तो क्या होता इसकी कल्पना आसानी से की जा सकती है। हमें अच्छी तरह पता है कि सेंट किट्स मामले में उस समय के विदेश मंत्री पीवी नरसिंहराव के कहने पर ऐसे ही दस्तावेजों की जब न्यूयार्क के हमारे वाणिज्य दूतावास ने संपुष्टि कर दी थी तो क्या हुआ था। भंडारी ने हर्पद मेहता के वकील रणधीर जैन को यह कहने की भी जरूरत नहीं समझी कि उनके पास जीनिवा मे हर्षद मेहता की गतिविधियों के संबंध में कुछ संवेदनशील सूचना है तो उन्हें ये सूचनाएं गृहमंत्री को देनी चाहिए और वे प्रवर्तन एजेंसियों के जरिए आवश्यक जांच करा सकते थे। स्पष्ट है कि भंडारी को केन्द्र में अपनी ही पार्टी के गृहमंत्री पर पूरा भरोसा नही था। ना ही उन्होने प्रधानमंत्री से संपर्क करने की जरूरत समझी। इसके उलट एक राज्यपाल के रूप में उन्होने इस तथाकथित श्अभियानश को अपने और हर्षद मेहता के वकील के बीच ही रखने का फैसला किया।

इस पृष्ठभूमि में, उत्तर प्रदेश विधानसभा के चुनावों के समय देश के सबसे बड़े राज्य के राज्यपाल के रूप में भंडारी की नियुक्ति बहुत कुछ बोलती है। त्रिपुरा की वाम मोर्चे की सरकार ने 1993 में चेतावनी दी थी कि भंडारी को राज्यपाल पद से हटाने के लिए केन्द्र को मजबूर करने के लिए वह राजभवन का अनिश्चित काल के लिए घेराव करेगी। सरकार का आरोप था कि वे राज्य की बाकायदा चुनी हुई सरकार को अस्थिर करने की कोशिश कर रहे थे और कई बार वे अपनी सवैधानिक सीमाओं को भी लाघ गए थे। लेकिन, इस बार वामपंथियों ने चुप रहने का फैसला किया वह भी तब जब वे लोग संयुक्त मोर्चे की सरकार का समर्थन कर रहे थे और भाकपा के दिग्गज नेता इंद्रजीत गुप्ता गृहमंत्री थे। बताया जाता है कि इस मामले में गृहमंत्री से सलाह नहीं ली गई क्योंकि यह महज तबादला था, हालांकि कायदे से यह मामला साफ तौर पर उनके क्षेत्राधिकार में था।

लोकसभा के सदस्य की संलिप्तता

मोहम्मद शहाबुद्दीन मार्च 1996 में जनता दल के टिकट पर बिहार के सिवान निर्वाचन क्षेत्र से लोकसभा के लिए चुने गए। 1997 के मध्य में जनता दल में हुए विभाजन के बाद वे लालू प्रसाद यादव के नेतृत्व वाले राष्ट्रीय जनता दल में बने रहे। 1998 के मध्यावधि चुनाव में राष्ट्रीय जनता दल के टिकट पर वे दोबारा लोकसभा के लिए चुने गए । मतदान के दिन से ही वे कई हत्याओं में कथित रूप से शामिल होने को लेकर विवादों के केंद्र में रहे । श्सिवान के . आतंक के रूप में मशहूर शहाबुद्दीन एक मतदान केंद्र के निकट भाकपा (माले) के कार्यकर्ताओं पर गोली चलाने के एक मामले में अभियुक्त बनाये गये थे। इसमें तीन कार्यकर्ता मारे गए थे। खबरों के अनुसार जब सिवान के पुलिस अधीक्षक और एक हिम्मती कर्तव्यनिष्ठ पुलिस अधिकारी एसके सिंघल ने पीछा किया तो उनपर भी गोलियां चलाई गई । राज्य पुलिस उन्हे गिरफ्तार करने में असफल रही बावजूद इसके कि वे सिवान से पटना और दिल्ली आते जाते रहे और यहां तक कि उन्होने संसद की बैठकों में भी हिस्सा लिया। आखिरकार पटना उच्च न्यायालय के सख्त निर्देशों के बाद उनकी गिरफ्तारी हो सकी। अगस्त 1996 में पटना उच्च न्यायायल ने अपने एक फैसले में सीआईडी के पुलिस अधीक्षक को जनता दल सांसद को गिरफ्तार करने के लिए दस दिन की मोहलत दी। मुख्य न्यायाधीश डीपी वाधवा ने तो वास्तव में पुलिस को धमकी दी और कहा कि ष्अगर शहाबुद्दीन को गिरफ्तार नहीं किया गया तो इस मामले की अगली सुनवाई के दिन देखिएगा आपके साथ क्या होता है।ष बिहार पुलिस एसोसिएशन ने राज्य सरकार को दिए गए ज्ञापन में आरोप लगाया था कि राजनीतिक दबावों के कारण वरिष्ठ पुलिस अधिकारी इस सांसद के खिलाफ को ई भी कार्रवाई करने में असमर्थ हैं। उच्च न्यायालय के आदेश के तहत उनकी गिरफ्तारी के पहले माकपा (माले) और भाजपा के विधायकों ने मोहम्मद शहाबुद्दीन को गिरफ्तार करने में सरकार की विफलता को लेकर नौ जुलाई 1996 को बिहार विधानसभा में जमकर आवाज उठाई और राज्य सरकार की खिंचाई की। पटना उच्च न्यायालय द्वारा सख्त आदेश जारी करने के पहले तक कुछ भी नहीं हो सका और इसके बाद भी वे जल्द ही जेल से बाहर निकलने में सफल हो गए।

जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय छात्र संघ के अध्यक्ष चंद्रशेखर और उसके साथ एस. नरेश यादव की 1997 के शुरू में हत्या कर दी गई थी। इसके बाद शहाबुद्दीन एक बार फिर विवादों के केंद्र में आ गए। सिवान के रहने वाले ये दोनों छात्र नेता 31 मार्च 1997 को अपने ही शहर में एक सभा को संबोधित करते हुए दिन दहाड़े गोलियों के शिकार हो गए। यह आरोप लगाया गया कि इस हत्या के पीछे सांसद का हाथ रहा है। और उनके समर्थकों ने ही चंद्रशेखर और उसके साथी की गोली मारकर हत्या की। 15 अप्रैल 1997 को देश भर के हजारों छात्रों, चंद्रशेखर के गांव बिंदुआव से पैदल चलकर सिवान में जयप्रकाश नारायण की प्रतिमा के निकट पहुंचे। वहां इनलोगों ने एक संकल्प रैली आयोजित की । जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय के प्राध्यापक स्मिता कोठारी, सामाजिक कार्यकर्ता प्रमिला लेविस, पत्रकार आशीष पटनायक और श्इंसाफश के मेहंदी असलम के एक स्वतंत्र जांच दल ने पाया कि परिस्थितिजन्य साक्ष्य बताते हैं कि चंद्रशेखर और उसके सहयोगी की मृत्यु के लिए मोहम्मद शहाबुद्दीन मुख्य रूप से

जिम्मेदार हैं। इस समिति ने कहा कि यद्यपि शहाबुद्दीन सिवान जेल मे बंद है लेकिन पूरे इलाके पर उनका नियंत्रण है। वास्तव में शहाबुद्दीन की ताकत इतनी है कि स्थानीय प्रशासन भी कोई कार्रवाई करने के खिलाफ है और यह मामला सीबीआई को सौंपने में खुश था। यहां तक कि वकीलों ने भी शहाबुद्दीन के खिलाफ कोई भी मामला हाथ मे लेने से इंकार कर दिया। समिति ने रिपोर्ट दी कि सिवान में शहाबुद्दीन का आतंक ऐसा ही है। सच्चाई का पता लगाने वाली स्वतंत्र समिति घटना का सिलसिलेवार ब्यौरा इकट्ठा करते हुए निम्नलिखित नतीजे पर पहुंची हमला सोच–विचारकर किया गया और सुनियोजित था। चंद्रशेखर और यादव दोनों को निशाना बनाया जाना तय था। हमलावर निचले स्तर के हिटमैन से ज्यादा कुछ नहीं थे, इन्होंने खुद से ऐसा नहीं किया होगा। हत्यारे स्वचालित और अर्द्धस्वचालित हथियारों से लैस थे। हालांकि, यह सब कुछ इस नतीजे पर पहुंचने के लिए पर्याप्त नहीं है कि शहाबुद्दीन इसमें शामिल थे लेकिन डर इस बात का था कि हमेशा की तरह, कुछ भी नहीं किया जाएगा। पुलिस के दिमाग में पिछले वर्ष पुलिस अधीक्षक पर हुए हमले का डर छाया हुआ था। इस पुलिस अधिकारी ने जैसे ही कुछ कार्रवाई शुरू की, उसका भी तबादला कर दिया गया। चंद्रशेखर की वृद्ध एवं साहसी मां कौशल्या देवी ने 31 अगस्त 1997 को दिल्ली में एक विरोध प्रदर्शन के दौरान सभा को संबोधित करते हुए कहा । यह किसी से छुपा नहीं है कि उसकी (उनके पुत्र चंद्रशेखर की) हत्या कर दी गई है. राज्यों में न्यायपालिका उच्च न्यायलयों की देख–रेख में काम करती है। हमारी न्यायिक प्रणाली की सबसे महत्वपूर्ण विशिष्टता इसकी स्वतंत्रता है। संविधान में ऐसे कई प्रावधान है जो न्यायिक स्वतंत्रता के लिए सुरक्षा प्रदान करते हैं । संविधान ने सुप्रीम कोर्ट और हाई कोर्टो के जजों का नियत कार्यकाल सुनिश्चित किया है। इस दौरान उन्हें पद से नहीं हटाया जा सकता है। जजों को सिर्फ संसद में महाभियोग के जरिए ही हटाया जा सकता है। इसमें सदन के दो–तिहाई बहुमत को उसका अपराध अथवा अक्षमता को साबित करना होगा। उनके वेतन निश्चित होते हैं और कार्यकाल के दौरान उनमें परिवर्तन नहीं हो सकता है।

सवाल यह उठता है कि इन उपायों ने क्या देश को ऐसी स्वस्थ आपराधिक न्याय व्यवस्था देने में कोई सहायता प्रदान की है जो विधि के शासन को सुनिश्चित करता हो और जो विधि व आम नागरिकों के मौलिक अधिकारों को समान रूप से लागू करा सके। इस प्रश्न का सकारात्मक उत्तर देना कठिन है। यह एक जज की अपनी राय है। वे 1984 के सिख विरोधी दंगों (उल्लेखनीय है कि इंदिरा गांधी की उन्हीं के सुरक्षा गार्डो द्वारा हत्या करने वाले सिख थे) में बड़े पैमाने पर हुए सिखों के कत्लेआम में शामिल 89 लोगों के खिलाफ आदेश देते हुए उन्होने यह टिप्पणी की थी। अतिरिक्त सेशन जज शिव नारायण धींगड़ा ने 27 अगस्त, 1996 को कहा कि कानून में समानता के जो बुनियादी सिद्धांत है, जो संविधान में निरूपित हैं, वे देश में अब बेअसर हो चुके हैं। भ्रष्टाचार का वर्णन करना जैसे सूर्य को दीपक दिखाना है।

भ्रष्टाचार के कुछ सामान्य क्षेत्र

(क) पुलिस विभाग – यदि चोर पकड़ने वाले ही चोरी करें तो इससे अधिक समाज का क्या दुर्भाग्य हो सकता है? प्रथम सूचना रपट से लेकर अपराधियों को छोड़ने तक में पुलिस विभाग बदनाम है। आजकल पुलिस वाले अपराधियों से भी साठ–गांठ करने में लिप्त है।

(ख) रेलवे – आरक्षण में भ्रष्टाचार रेलवे प्रशासन पर सबसे बड़ा काला धब्बा है । यह आर्थिक दृष्टि से इतना महत्वपूर्ण भले ही न हो पर उसका सामाजिक प्रभाव अति दूरगामी है। प्रायः इसकी चर्चा जीवन का एक अंग बन चुकी है क्योंकि आजकल के युग में यातायात का अभूतपूर्व प्रसार हुआ है। अतः इसका दुष्प्रभाव समाज के नैतिक जीवन पर अति खराब एवं व्यापक पड़ता है। अतिशयोक्ति न होगी, यदि यह कहा जाय कि प्रत्येक भारतीय भ्रष्टाचार का प्रथम खुला पाठ रेलवे के आरक्षण से पढ़ता है। सामान की बुकिंग, पार्सल आदि क्षेत्रों में भी भ्रष्टाचार का बोलबाला है। धन–वापसी (रिफंड) तो सभी विभागों में भ्रष्टाचार का गढ़ है। रेलवे में ठेके तो राजनीतिक अपराधियों के प्रमुख स्रोत हैं । सन् 1954–55 में कृपलानी कमेटी ने पाया कि रेलवे में ठेकेदार ठेकों पर निम्न प्रकार से व्यय करते थे

अधिशासी अभियंता–5ः, सहायक अभियंता–5ः, सुपरवाइजर–5ः, लेखाधिकारी–2ः, भुगतान लिपिक–๘ः, बड़ा बाबू–1ः, रेलवे मंत्रालय–1ः, विविध–๒4ः.

कुछ लोग इस प्रतिशत को व्यावहारिक नहीं मानते हैं क्योंकि फिर तो ठेकेदार का लाभ लेकर काम हो ही नहीं सकता है। दूसरे पक्ष के लोग कहते हैं कि सभी विभागों की भांति रेलवे में भी कहीं–कहीं बिहार की भांति बिना काम किये भुगतान हो रहे हैं पर रेलवे प्रशासन में एक शुभ पक्ष है कि रेलगाड़ियों को चालू रखने एवं जान–माल की रक्षा के लिए रेलवे गुणवत्ता एवं समय के साथ समझौता नहीं करता है। (ग) अन्य क्षेत्र – आयात–निर्यात संगठन, आयकर–विभाग, उत्पादन एवं सीमा शुल्क विभाग, बिक्री कर विभाग, चुंगी–विभाग, सार्वजनिक निर्माण, सिंचाई एवं विद्युत विभाग एवं अन्य इंजीनियरी विभाग जैसे केन्द्रीय लोक निर्माण विभाग भी भ्रष्टाचार की अग्रणी श्रेणी में आते हैं। सर्वेक्षण के अनुसार कृषि–विभाग, खाद्य–विभाग, आबकारी विभाग अन्य परंपरागत विभागों से बाजी मार ले गए। उ0प्र0 प्रभृति अनेक राज्यों में तो जिला–स्तर की न्यायपालिका में भी काफी सीमा तक भ्रष्टाचार व्याप्त है जो अपराध को बढ़ावा देता है और विकास को प्रभावित करते हैं।

उपसंहार

सार्वजनिक जीवन से भ्रष्टाचार को मिटाकर राजनीतिक व्यवस्था को अपराधीकरण से कैसे बचाया जा सकता है? न्यायपालिका, पुलिस तथा सीबीआई में सुधार, निःसंदेह आपराधिक न्याय व्यवस्था को मजबूत बनाने में महत्वपूर्ण योगदान देंगे, लेकिन इससे समस्या का संपूर्ण हल नहीं निकलता। उदाहरण के लिए, सीबीआई अगर आज वह नहीं है जो वह पहले थी, तो इसका कारण यह भी है कि राजनैतिक स्तर पर शासन के स्तर में लगातार गिरावट आई है। तब जरूरी इच्छा शक्ति से युक्त ऐसा राजनीतिक नेतृत्व था जिसने उच्च प्रतिष्ठा व साख वाली जांच एजेंसी के रूप में सीबीआई का गठन किया था। लेकिन एक ऐसा वक्त भी आया जब कुछ महत्वपूर्ण मामलों की जांच में सीबीआई को शीर्ष राजनैतिक सत्तधीशों के नियंत्रण से बचाने के लिए सुप्रीम कोर्ट को दखल देना पड़ा । सारांश यह है कि तत्काल राजनैतिक सुधार की आवश्यकता है। आज से 63 साल पहले जुलाई 1947 में महात्मा गांधी ने राजनीतिकों, प्रशासकों तथा देश के प्रत्येक नागरिक से देश को भिन्न नेतृत्व देने की उम्मीद करते हुए एलान किया था, श्अगर लोगों के साथ अन्याय होता है तो वे संबंधित मंत्री के कान पकड़ सकते हैं, और उसे हटा सकते हैं। हमें अब ऐसी ही शक्ति पैदा करनी चाहिए। मंत्री लोगों पर शासन करने के लिए नहीं है, बल्कि उनकी सेवा के लिए हैं। 27 जुलाई 1947 तक भी उन्होने एक ऐसे नए भारत की उम्मीद नहीं छोड़ी थी जो खुशहाल, शांतिमय तथा संपन्न देश होगा। उस दिन प्रोफेसर बालाजी देसाई को पुणे में लिखे पत्र में उन्होने कहा था, श्यदि ईश्वर को मेरी सेवाओं की जरूरत है तो वह मुझे 125 नहीं, 150 साल तक जिंदा रखेगा और यदि उसे मेरी आवश्यकता नहीं है तो वह मुझे आज ही उठा सकता है रू व्यक्ति को वैसे

ही रहना चाहिए जैसे राम रखें। लेकिन 30 जनवरी 1948 को क्रूर हाथों द्वारा उनकी हत्या कर दी गई और एक नए भारत यानी श्राम राज्य का उनका सपना अधूरा रह गया। हमें मालूम है कि उसके बाद कैसे राजनीति व राजनीतिक जीवन का पतन होता गया।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

- आस्टिन, नौन्चिल रू दी इंडियन कॉन्सटीटयशन (कार्नर स्टोर ऑफ ए नेशन). आर. दयाल, ऑक्सफोर्ड यूनीवर्सिटी प्रेस, ऑक्सफोर्ड हाउस, मुंबई, 1979
- अब्राहम, एच. जे. रू दी जुडीशियल प्रॉसेस, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, दिल्ली, 1978 46. ब्रास, पाउल आर. रू कास्ट फैक्शन एंड पार्टी इन इडिपन पॉलिटिक्स, वॉल्यू0–1.
- चाण्क्य पब्लिकेशन्स, दिल्ली, 1954 47. ब्रास, पाउल आर. रू कास्टफैक्शन एंड पार्टी इन इंडियन पॉलिटिक्स, वाल्यू–11,
- चाणक्य पब्लिकेशन, दिल्ली, 1985 48. ब्रास, पाउल आर. रू फैक्शनल पॉलिटिक्स इन एन इंडिया स्टेट, कांग्रेस पार्टी इन उत्तर प्रदेश, वर्कले, 1966 49.
- ब्रास, पाउल आर. रू पॉलिटिक्स ऑफ इंडिया सिन्स इंडिपेन्डेन्स, कैम्ब्रिज यूनीवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रिज, 1990 50.
- बेचा, माइकेल रू पॉलिटिक्लीडरशिप इन इंडिया, ऐन एनेलिसिस ऑफ इलीट ऐटीच्यूड्स, न्यायार्क, 1969 51.
- भार्गवा, जी. एस. रू पॉलिटिक्स करप्शन इन इंडिया, पॉपुलर बुक सर्विसेज, नई दिल्ली. 1967 52.
- भार्गवा, जी. एस. रू ऑफ्टर नेहरू, इंडिया न्यू इमेज, एलॉण्ड पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 1966 53.
- भीखू, पारिख (एडीटेड) एंड बर्की, आर० एन० रू दी मोरेलिटी ऑफ पॉलिटिक्स, जार्ज
- एलेन एंड अनविन लिमिटेड, लंदन, 1972 बख्शी, उपेन्द्र रू दी इंडियान सुप्रीम कोर्ट एंड पॉलिटिक्स, ईस्टर्न बुक कंपनी, लखनऊ, 1980 55.
- बख्शी, उपेन्द्र रू ऑन दि शेम ऑफ नाइट बीडंग इन एक्टिविस्ट थाट ऑन जूडिशियल एक्टीविज्म, इंडियन बार रिव्यू, वॉल्यू0–2 (3). 1984